गायत्री २... लद

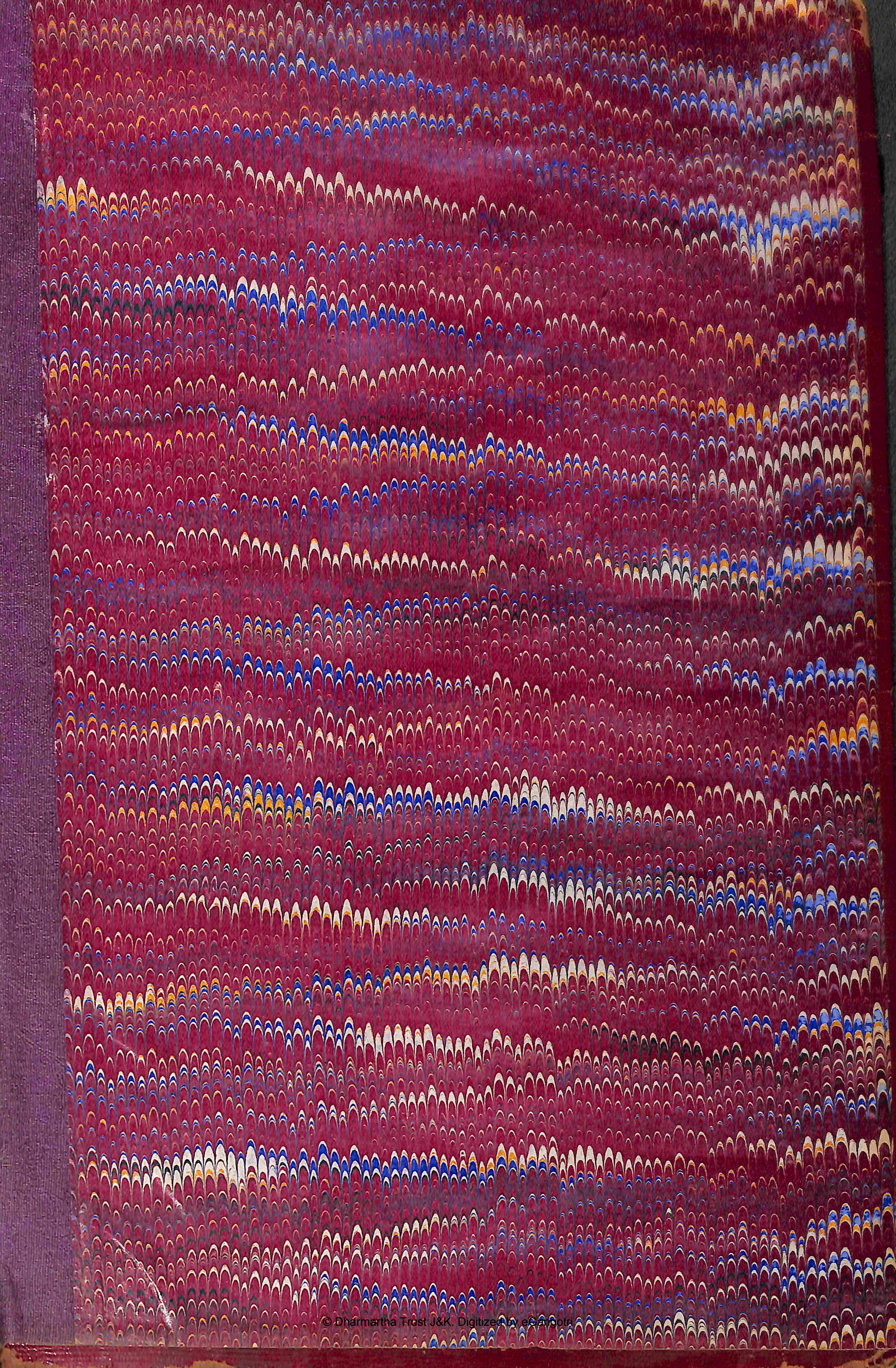
शिवनाथजीके

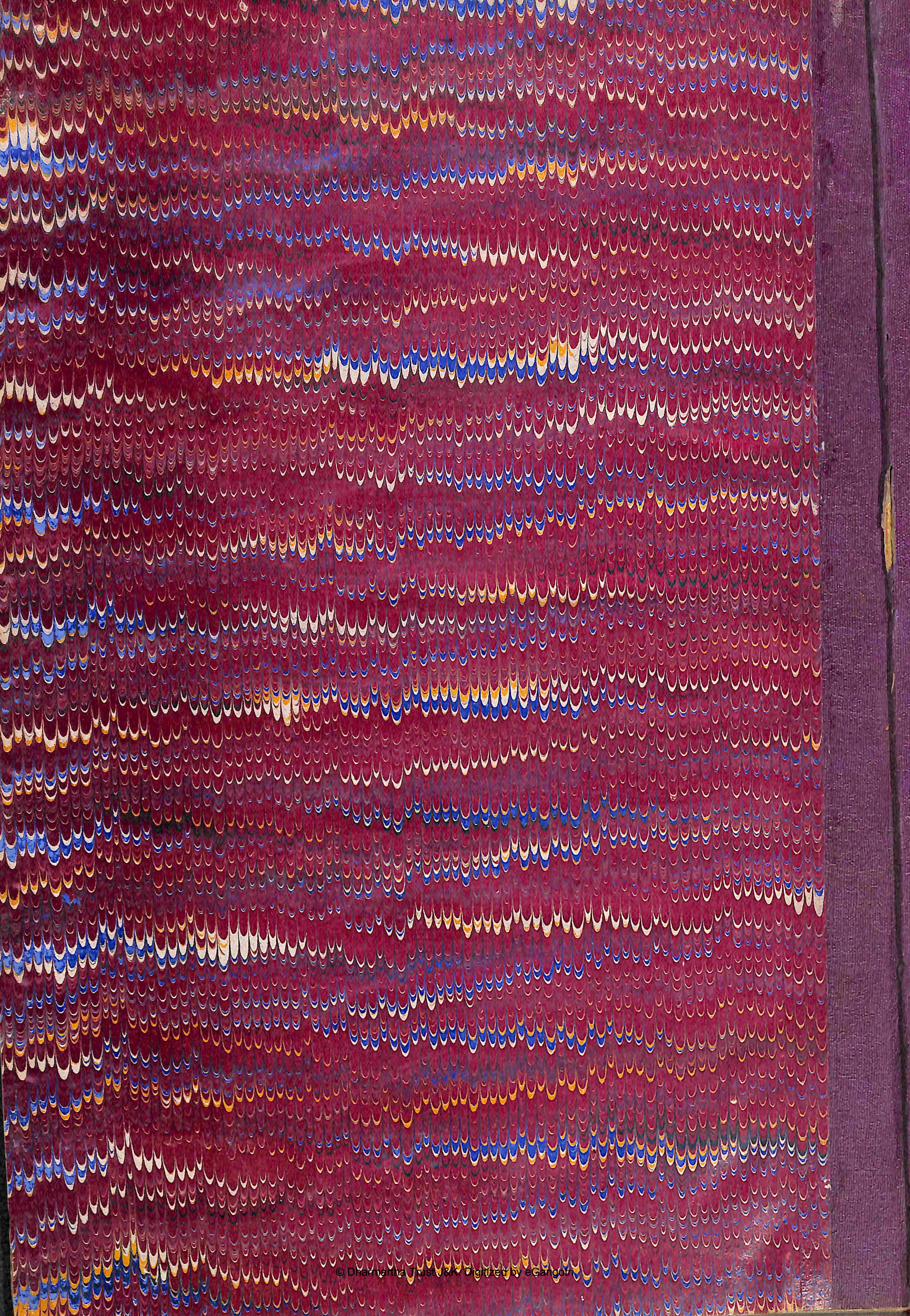
शिवभजनगुणि

त्रिभुवनं

वाह:

वागदरीशिवस





नं० ५३६२-घ (वेदमन्त्र)
अथर्वणवेदे श्रीरामतापनीयोपनिषत्
भाषाटीका सहिता
पत्राणि ९० (संपूर्णम्) नं. ८६

रामतापनीयोपनिषद्
भाषा टीका सहित
९० पत्र



मूल ॐसंसंतारकनत्वमो मिद मात्र स्थूलं वत मा
दकं जाग्रत्स्वप्न सुषुप्तिं स्फति वपुषा ह्यिस्थायतीतं
विश्वम् भुनासांत उपास्यमानः ममरैः स्तत्सरी
यात्मकं भक्ताद् ग्रहविग्रहं जनकजा जानिं भजेरा
घवम् १ ॥

ॐनमो रघुनाथ पदक जेभ्यः रामता
पनीय उपनिषद की टीका को कर
णेवाला विघ्नोकी निवृत्ति वास्ते मंग
ल को करताहै संप्रमिति जनकजा
जो जानकी है तिसकाभर्ता जो राघ
वहै तिसको मैंभजन कर्ताहूं कैसा
है राघव सत्य क्या कहिये अविनाशी
ॐकार रूप तारक क्या संसारसे तार
णे वाला ब्रह्मरूप तत्व है और इह जो
प्रत्यक्ष लखने आवने वालाविश्व भी है
इसी वास्ते सूक्ष्म और स्थूल है और जा
ग्रत स्वप्न सुषुप्ति रूपतीन अवस्थाओं
विषे अनुसंधान केवशासे तुरीय रूप
करके व्यापक है इसी करके चार पादों
वाला है परमार्थ करके विश्वआदिकों
से अतीत क्या न्याराहै इसी करके वि

सु व्यापक है और उपासक जनो ने भ
क्ताँ और नासाके अग्र विषे उपास
ना कीता है और देवता ने योने स्तुती
करणे के योग्य है और तरीय जो श्री
न अहेन है तत् रूप होके भी भक्त
जनोके अनुग्रह रूप शरीर को धार
ण करके साकार बना है २ ॥

मूल यः शास्त्रे परिनिष्ठितोप्य परमे ब्रह्मण्य पि न्याय
तो यत्कारुण्य स्फोट विंदु कनिका संसार संतापनु
त् यस्तांभीर्य मगाधमप्य नुचरै र्गीयं समा श्रीयते
तस्य श्रीगुरु राघवस्य चरण द्वंद्वार विंदं नुमः ३ इह
हि कश्चन उपरतः सन् संसारोच्छित्ति हेत्वन्वेषणे क
रोति संसारश्च ब्रह्मात्मैकत्वाः परिज्ञान विलसित
त्वात् ब्रह्मात्मैकत्वज्ञाने नैवो छेद संभवात् रमणीय
तरत्वे ३ तत्र श्रीरामविद्या सिसाधयिषया श्रीरामोत्तर
तापनीयो पनिषत् सगुणो पासन फलभूत निर्गुणो
पासन परतया प्रवर्तते ४ ॥

भाषा अब ऐसे श्रुति उद्धेट ग्रंथकी
सिद्धिवास्ते राघव से अभिन्न श्रीगुरों
के चरण प्रणाम को सहाय वास्ते
आश्रित करता है यः शास्त्रे इति जो
श्रीगुरु महाराज प्रथम शास्त्र का

ए॰ना॰
टी॰
२

कहिये वाचक रूप शाह ब्रह्मतिस
विषे भलीप्रकार स्थित है उस उ
परंत पर ब्रह्म जो शुद्ध चित रूप
तिस विषे भी निश्चय करके निष्ठा वा
लाहै अर्थात् श्रोत्रिय भी और ब्रह्म
ब्रह्मनिष्ठभी है जिस श्रीगुरु की जो द
या रूप अमृत लहरी है तिसका जो
सूक्ष्मजल बिंदु किये कनीहै सो
संसारके संताप को हर करणे वाली
है जि सगुरु महाराज की गंभीरता
का समाधि निष्ठता अगाध का कहि
ये बहुत ईंगी अवरां को ज्ञानगोचर
नहीं होने वालीके वलतिस के अनु
चर जो सदा चरणो की सेवा विषेत
त्पर भक्तजन तिन्होने आश्रय करीही
है तिसी श्रीराम से अभिन्न स्वरूप श्री
गुरूके चरण कमल युगल को प्रणा
म करतेहो २ अबतैंग्रंथकार करणे
के योग्य उपनिषद् विवरणके पीछे
कांवंय को करता है इहाहिइति इस

संसार विषे कोई अधिकारी वैराग्य करके प्रवृत्तिसे छूट गया संसार के छे द करणे वाले हेतुके ढूंढनेको करता है संसार का ब्रह्म और जीवात्माके एकताका जो नही जानना अर्थात् अज्ञान है तिसका विलास मात्र होने में ब्रह्म और जीवात्माकी एकता जो है तिस करके ही छेद होनेसें रमणी यतरता का योग्यताहै ३ तिस उते श्रीराम जो परमात्मा है तिस की जो विद्या ज्ञानसाधन है तिसके साधन करणे की इच्छा करके श्रीरामोत्तरता पनीय उपनिषत जोहै सो सगुण जो स्थूल मूर्ति श्रीराम है तिस की जो स्तुतिपूजारूप उपासनाहै तिसके फ ल भूत जो निर्गुण उपासना का अ द्वैतनिष्ठाहै तिसविषे तत्पर होने क के प्रवृत्ति वाली हुईहै ४ ॥

मूल यद्यप्युत्रोपनि षदीन सदे निष्पन्नस्य उपनि षत शहस्ये व मुख्यया हमा श्रीराम ब्रह्मवि या

रा· ता·
भा· टी·
३

परत्वे तथापि लक्षणया हंसा ब्रह्मविद्यार्थीयो श्रुता
वपिप्रवृत्तिः ५ सर्वस्यैवशास्त्रस्य प्रवृत्ति र्नलक्षणेति
नवाच्यं हेडे उभयोः र्पि शास्त्र प्रवृत्तित्वेन स्वीकारा
त् ननु भवतु श्रुतिरूप ग्रंथोप्युपनिषत् तथापि न
माख्यानार्हेता साक्षात्वेन देहेन्द्रियां तःकरण विल
क्षणात्मनः कर्मविधि शेषत्वेन स्तुति परत्वात् ६
न तत्रतहि लक्षणसैवोपपादितत्वात् नहिंविल क्षण
ता मात्रेण ऽऽत्मस्वरूपे शक्या माकलयितुं प्रत्यक्त्वः
परमात्मा ब्रह्मतत्त्वमसीत्यादि महावाक्यैः ब्रह्मात्मै
त्म कत्व लक्षण मात्रतत् निरूप्यते उपऽगतार्थत्वेन व्या
ख्यानार्हत्व साक्षात्त्वेदेव ७ ॥

भाषा जदभी उपशास्त्र और निशास्त्र ए
वेपद वाले षट् शास्त्रोमे उत्पन्न हुये
उपनिषत शास्त्र को लक्षणाकेबिना
मुख्यवृत्ति करकै ही श्रीराम ब्रह्म वि
द्याविषे तात्पर्य है तोभी लक्षणावृत्ति
करकै ब्रह्मविद्याके अर्थ विषे प्रवृत्त
हुई श्रुतिविषे भी प्रवृत्ति है ५ शास्त्र
की प्रवृत्ति मुख्यही है लक्षणात ना
ही है ऐसा नही कहना हउ जो मा
नना नने वाले तिन्होने दोनो कोही
मुख्यवृत्ति और लक्षणावृत्ति को भी
शास्त्रकी प्रवृत्ति को अंगीकार कीने

होनेसे इसमैं एवंपक्षवादी पुछता
है होवे श्रुतिरूप ग्रंथ भी उपनिष
नतो भी व्याख्यान करणे की योग्य
ता को नही पावेगा क्यों किदेह औ
र इंद्रिय और अंतःकरणसे विलक्ष
ण जो आत्माहै तिस आत्माके कर्म
विधि की शेषता करकें स्तुतिविषे
लगी होनेसे अर्थात् अर्थवा दमा
त्र होनेसे ८ उत्तर पक्षवादी कह
ताहै इहतउ नहीहै जिसकारण
उहां कर्मनि रूपण विषे देह आदि
कोंसे विलक्षणता की ही निरूप
ण कीते होनेसे केवल विलक्ष
णता करकें आत्माका स्वरूप नही
निरूपण कर सकेदा इस उपनिष
न विषे इह जीवात्माही ब्रह्महै सो
ही परमात्मा तमहो इसी प्रकार
जीव और ब्रह्मकी एकतालक्षण
ब्रह्मतत्त्वका निरूपण अयमात्मा
ब्रह्मतत्त्वमसि ऐसे महावा क्यों क

ग·ता
भा·टी·
४

कै सिद्धकरणे आवताहै इस प्रका
र नहीं जाने हुये अर्थवाली होने
करके व्याख्यान करणे की योग्यता
को पावतीही है ७ ॥

मूल ननु कर्मकांड देवताकांडयोः क्रिया तत्फ
ल परत्वादेक स्यैव वेदस्य वाक्यभेद प्रसंगे न
व्याख्याना हैत्व मितिचेन्न कांड त्रयस्य एकवाक्य
ता प्रसिद्धेः कर्मकांडे नमेनमित्यनया विविदि
य षा मन्त्रार्थ यज्ञदानादिना अंतःकरणशुद्धिंव
िधाय देवता कांडेच उपासनया शुद्धांतः क
रणे चित्त स्थैर्य शिक्षित्वा ज्ञानकांडे त्वंपदार्थ
4 तत्पदार्थ हय परिशोधनेन जहद जहद्लक्षण
या ब्रह्मात्मैकत्वं प्रति श्रवणादिना प्रयति तव्य
मिति कांडत्रयसंगतिः श्रीमत् शंकराचार्यैर्वेद
शिना नानःपृथक् प्रयत्न आश्रीयते ८ ॥

भाषा पूर्वपक्षवादी फेर पूछताहै
कर्म कांड और देवता कांड को क
म करके क्रिया और फलविषे तात्प
र्यवाले होने करके एकहीवेद को
वाक्यभेद के प्रसंग करके किसीस्था
नविषे कछु किसीस्थान विषे कछु
कहनेसे विरुद्ध अर्थके प्रतिपादन

करणेसे व्याख्यानकरणे की योग्यता
नही है इह जो तुमकहोगा इहनही
होताहै क्यों कि वेद के तीनही कांडों
को एकवाक्यता की प्रसिद्धी होतीहै
जैसातो कर्मकांड विषे तमेतं वेदानु
वचनेन ब्राह्मणा विविदिषंति इस
श्रुति करके ज्ञानकी इच्छाको सिद्ध करके
यज्ञ औरु दान आदिकों करके अंतःक
रण की शुद्धीको बनाय के उपासना
रूपदेवता कांड विषे उपासना करके
शुद्धअंतःकरण वालियोंने चित्तकी
स्थिरता को अभ्यास मैंले करके ज्ञान
कांड विषे त्वंपदका अर्थ जो जीवहै
औरु तत्पद का अर्थ जो ब्रह्महै उनों दो
पदोंके सोधने करके जहदजहत् लक्ष
णा जो भागलक्षणाहै तिस करके जी
व औरु ब्रह्म की एकताके उत्ते श्रवण
मनन आदिकों करके यत्नकरणाचाहिये
इसी प्रकार तीनकांडों की संगति का
एकवाक्यता श्रीमत शंकरस्वामी ने

रा॰ता॰ टी॰ ५

ही दिखाई इसीवास्ते भिन्न वेदे यत्न नही
आश्रित करना ८ ॥

मूल ननु भवतु कोऽत्रय संगतिः तथापि वेदानां ग्रा
ह्यत्वात् शब्दस्यैव श्रीरामब्रह्म परत्वाऽसंभवात् तथा
ख्या युक्तिमती यतः शब्दवृत्तिः त्रिधा मुख्या लक्षणा
गौणीचेति मुख्याऽपि द्विविधा रूढि योग भेदेन
तत्ररूढिः तावत् ब्रह्मणि नप्रवर्तते तस्य शब्दाऽगो
चरत्वात् तस्याखस्वरूप जाति गुण निर्देशाद्यै वस्तु
ति एव डित्थः गोः शुक्ल इति संज्ञा संज्ञि संकेतेन
प्रवृत्तेः नचयोगः ब्रह्मणोऽसंगत्वेन संबंधाभावात्
योगवृत्तेःनिरा करिष्यमाणत्वात् ४ नापिलक्षणा
लक्षणायास्तु संज्ञा संकेतेनाऽभिहितार्थ संबंधिनि
वर्त्तति गंगायां घोष इति वत्प्रवृत्तेः यथाहुः अभि
धेयाऽविनाभूत प्रतीति लक्षणोच्यते नचगौणी
ब्रह्मणो निर्गुणत्वात् गौणयास्तुऽभिहितार्थ लक्षित
गुणयुक्ते तत्सदृशे सिंहो माणवक इतिव प्रवृत्तेः
यथाहुः लक्ष्यमाण गुणै योगा द्वृत्ते रिष्टातु गौणते
ति ९ ॥

भाषा इतना सनके दी पूर्वपक्ष वादी वा
द को उठावताहै अच्छा होवे तीनकों
ईकी एकवाक्यता तोभी वेदांकों ग्रा
ह्य होनेसे शब्दको श्रीराम रूप ब्रह्मवि
षे तात्पर्यवत्ताके नही होनेसे टीका
कारणी योग्यता वाली नहीहै जिसका

यण शब्दकी वृत्तितीन प्रकार है एक
मुख्य नामक दूसरी लक्षणानामक
तीसरी गौणीनामक है तिनोविषे प
हली जो मुख्यनामक है सोदो प्रकार
वालीहै रूढि और योगके भेद करके
तिनादो भेदो में रूढि जोहै सो ब्रह्म वि
षे नही चलती है तिस ब्रह्मको शब्द
का विषयनही होनेसे तिस रूढिको
जोस्वरूप और जाति और गुण करके नि
र्देश करणे योग्य वस्तुविषे ही संके
क्रमसं गीजो जो नामवाला तिनोदोनो के संकेत क
के ही प्रवृत्ति होनेसे जैसा डित्थ शब्दको
स्वरूप मात्र काही संबंध है गौशब्दको
जातिमात्रकाही संबंध है शुक्ल शब्दको
हि गुणमात्र का संबंधहै ऐसाही ब्रह्मवि
षे योगभी नहीहै ब्रह्मको असंग हो
ने करके संबंधके नही होनेसेयोग वृ
त्तिको प्रवेश लेशन करणेके विषय हो
नेसे इहां लक्षण और उदाहरण नहींदि या
जाताहै ९ ऐसा ही लक्षणा भी ब्रह्म॰

ग॰ ना॰ टी॰ ८

विषे नहींहै लक्षणाकों संज्ञाके
संकेत करके कहने आवने वाले
अर्थके संबंधी वस्तुविषे प्रवृत्ती
होनेसे जैसा गंगायां घोष इस वि
षे संज्ञा जोगंगा शब्दहै तिसके
संकेत करके कहने आवने वाला
अर्थजो प्रवाह है तिसका संबंधी
जो तट है तिस विषे गंगाशब्द को
प्रवृत्ति होनेसे जैसाते कहनेहै अ
भिधेय जो संज्ञा शब्दका अर्थतिस
अर्थ केसाथ नित्य संबंध वाली जो
अर्थकी प्रतीति का ज्ञान है सो ल
क्षणा कहीदीहै ऐसाही ब्रह्मविषे
गौणी का गुण करके आवनेवाली
वृत्ति भी नहींहै ब्रह्मको गुणोंसेर
हित होनेसे गौणी को तो अभिहि
त का शब्द करके कहाहूवा अर्थ
तिस विषे पहचाने जो गुण तिना
गुणों करके सहित जो तिस समीप
अवर वस्तुहै तिस विषेंही प्रवृत्ति

होनेसे जैसातो सिंहो मानवकः बाल
क सिंह है इस बिषे सिंह शब्द करके
कहने आवने वाला अर्थ जो सिंह
है तिस बिषे लभने आवनेवाले जो
शूर्म पना आदिक गुणहैं तिना क
के सहित जो सिंहसे भिन्न बालक
है तिस बिषे सिंह शब्दकी प्रवृत्ति
होनेसे जैसातो कहतेहै लक्ष्यमान
जो लभनेआवने वाले गुण हैं तिनो
के साथ संबंध होनेसे इसवृत्ति को
गौणता संमत है इस को गौणी क
हतेहैं ९ ॥

मूल योगवृत्ते र्योगत्वात् द्वेनो नै ब्रह्म परंत्व
तस्याश्च वृद्धि लक्षण गुणरूप त्रिविध वृत्ति
प्रतिपादित पदार्थयो र्वा प्रकृति प्रत्यययो
र्वा योगेन पंकजं औपगवः पाचक इत्यादिव
त्प्रवृत्तेः १० ॥

ए॰ता॰ टी॰ ७

भाषा योगावृत्ति को भी संबंध के न
ही होनेके हेतुसे बल पड़ता नही
है तिस योगावृत्तिको शुद्धि और लक्ष
णा और गुण रूप जो तीनप्रकारो क
कें कहीहुई वृत्ति करकें सिद्ध कीने
दो पदार्थोंके संबंध करकें अथवा
प्रकृति और प्रत्यय के संबंध करकें
प्रवृत्ति होनेसे जैसा पंकज शब्द वि
षेविकार से उत्पन्न होने करकें कवल
की प्रवृत्तिहै और औपगवशब्द विषे
उपगुके पुत्रहोने करकें और पाचक
शब्द विषे पाककरणे करकें प्रवृत्ति
है १९ ॥

मूल अतो ब्रह्मणः पदार्थत्वा॰ योगात् अपदा
र्थस्यच वाक्यार्थत्वा योगात् श्रुतिगोचरत्वं अ
प्रोच्यते ब्रह्मणः शब्दा॰ गोचरत्वेन असंगत्वे
न निर्गुणत्वेनच साक्षात् माभूत् श्रुतिगोचर
त्वे तथापि सगुण द्वारा निर्गुणो पासनया श्रु

र्त्मैव ब्रह्मपरत्वे वेदानां १२ तथाहिदयं सर्व
ज्ञः सर्ववित् यस्य ज्ञानमयं तपः सर्वस्य वशी
सर्वस्येशानः यःपृथिव्यां तिष्ठन् पृथिव्या अं
तरः सोकामयत बहुस्यां सपेयेत तत्तेजोऽसृ
जत सत्यंज्ञानमनंतं ब्रह्मेत्याद्याः श्रुतयो भ
गवंतं षड्गुणैश्वर्यं संपन्नं सकलकल्याणनि
लयं सर्वज्ञं सर्वशक्तिं सर्वेश्वरं सर्वनियंतारं
सर्वोपास्यं सर्वकर्मफलदातारं सच्चिदानंद
मगुणं गुणानंभिभूतं श्रीरामंप्रतिपादयंति
१३ ॥

भाषा इसीवास्ते ब्रह्मको पदोंके अ
र्थहोने के असंभवनहींजो पदका
अर्थहोवे उसको वाक्यार्थताके अ
योगहोने करके श्रुतियोंकी विषय
ता नहींहोतीहै इहतें पूर्व पक्षहूवा
इसविषे उत्तर वादी उत्तरको कहता
है ब्रह्मको शब्दके नहीं विषय हो
ने करके और असंग होने करके और
निर्गुणता करके भी साक्षात् श्रुतिकी
विषयता मतहोवे तोभी सगुणके

से २९

हार करके निर्गुण की उपासना क
के एकही वेदोंको ब्रह्म परता १२
तैसाही दिखाइ देतेहै यःसर्वज्ञः स
र्ववित् जो ईश्वर सब किसीको जा
नने वालाहै इसी करके सर्वज्ञ है
यस्य ज्ञानमयं तपः जिसका तप
क्या विमर्श ज्ञानस्वरूपहीहै सर्व
स्यवशी सर्वस्येशानः जिसवास्ते
संपूर्ण विश्वकाईश्वरहै इसी वास्ते
सब बिषे सामर्थ्य वालाहै यःपृथि
व्यांतिष्ठन् पृथिव्या अंतरः जो पृथि
वी बिषे ठहरणेवाला पृथिवीका
अंतरात्माहै सो कामयत बहुस्यां
सोही संकल्पको धारतारहा एक
हीहम बहुत हुवा सप्रेत्तत तत्तेजो
सृजत सो देखतारहा तिसीहेतु क
के तेजको उत्पन्न करतारहा सत्यं
ज्ञान मनंतं ब्रह्म सत्यज्ञानानंत स

सर्वोविषे बाधासे रहित ज्ञान का संवित रूप अनेन का देश और काल और आकार करके परिछेद रहित ब्रह्म है ऐसे ऐसे श्रुतियां भगवान श्रीराम को षट्गुण ऐश्वर्य करके सहित को सबही क ल्याणोंके आश्रय को सर्वज्ञ को सर्वशक्ति वालेको सबके ईश्वर को सबोके अंतर्यामी को सबोने उपासना करणेकेयोग्यको सब कर्म फलोंके देणेवालेको सत चित आनन्द को सगुण का सा कार को गुणोंने नहीं दबाये को सिद्धकरदिया है १२ ॥

मूल तत्व मस्यादि वाक्यानितु नाहंगी स्वरतां भावा जीवस्य संसार निह्वनिहारा तत्वे पद योः सामानाधि करण्य प्रतीत्यन्यथाऽनुप पत्त्या निर्गुणे पर्यवस्यंति १४ ननुसामाना धिकरण्य वैय्यधिकरण्यमितेति तदुभयोरेकार्थ

ऽभिधानेन कुतः भिन्नार्थत्वात् यथोक्तं आमि
क्षांदेवतायुक्तो वदमेवै घनद्विनः आमिक्षा
पदसान्निध्यात् सैववविषया पीतामिति ॥५॥

भाषा और अजहल्लक्षणा जो निरू
ढलक्षणा है तिस करके विशेष
ण और विशेष्य के संबंध)
तत्वमसि इत्यादिक महावाक्य
जो है सो जीव को तैसी ईश्वरता
के नही होने से संसार का जो
अभिमान पूर्वक प्रवृत्ति है तिस
की निवृत्ति के प्रकार करके तत
पद और त्वंपद को एक अर्थ की
वाचकता रूप जो सामानाधिकर
ण्य है तिस की योग्यता करके नि
र्गुण विषे तात्पर्य वाले होते हैं ॥५॥
तिनाँ दो पदों का सामानाधि कर
ण्य वैश्वदेवी आमिक्षा इनो दो प
दों के न्याई एक ही अर्थ के कहने
करके नही है क्यों कि भिन्न अर्थ

होनेसे जैसातो कहाहै वैश्वदेवी
पद विषे जो तद्धित प्रत्यय है सो
आमिक्षा को विश्वेदेव संबंध वा
लीको कहताहै आमिक्षा पदके
विषय मात्रका अर्पण होताहै
१५ ॥

मूल नचाः जहत्स्वार्थया निरूढ लक्षणया
विशेषण विशेष्यभावेन नील मुत्पलमि
तिवत् तद्धके स्वइया रज्यते येन विशेष्यं
तद्विशेषण मिति नच जहत्स्वार्थ त्वेन सं
बंधि लक्षणया कुसुमित द्रुमाग्रे गेतिव
त् कुतः एकार्थस्य विवक्षितत्वात् १७ अ
तो जहद जहत्स्वार्थलक्षणया सोयं देव
दत्त इतिवत् विरुद्धांश त्यागेना नुगत
विशेषैने कार्त्स्न्येन सामाना धिकरण्येन नि
र्गीते पर्य वसाने १८ अस्थूलादि वाक्या
नांत साक्षात् उपाधि निषेधेन उपासना
वाक्यानांत अन्यार्थ प्रवृत्त स्वध्याय वले
बनेन ज्ञानसाधन विधानेन निर्गुण ब्र
ह्म परत्वे प्रसिद्धे अतो ब्रह्मणि समन्वया
त् उपनिषदो व्याख्यान मुचित मित्यल
मतिप्रसंगेन १९ ॥

रा. ता.
टी.
२५

भाषा और अजहत्स्वार्था जो निरूढ
लक्षणा है तिस करके विशेषण औ
र विशेष्यके संबंध करके भी सामा
नाधि करण्य इनो दोपदों को न
हीहै जैसानील पद और उत्पल प
द को नीलमुत्पलं इस वाक्यविषे
होता क्योंकि विरोधी अर्थ वालेहो
ने करके तिसविशेषणवि शेष्यभा
व के नही होने से नील पद और
उत्पल पद को आपसमें विरोधी
अर्थनही है तद विशेषण विशेष्य
भावहोताहै जैसाही कहाहै जो अ
पनी एकाबुद्धी करके विशेष्यको
रंजन करेगा सो विशेषण होता
२८ और जहत स्वार्थता रूप संबंधि
लक्षणा करके कुसमिन डुमा गंगा
इस विषे जैसा समानाधि करण्य
नहीहै क्यों कि एकही अर्थको

10

विवक्षित होनेसे इहांगंगा शब्द करकें
गंगाका प्रवाह कहाजाताहै पूर्वोक्त
हितुम इसकों कैसें होनेगा इसवा
स्ते सो अपने अर्थ को छोडकेतटके
अर्थ को लक्षण करताहै इहांतोतत
पद और त्वंपद करकें एकही अर्थ क
हने आवताहै १७ इसीकरकें जहत
अजहत्स्वार्थनामक भागलक्षणा क
कें सोयं देवदत्तः इस वाक्यकेन्याई
विरोधी अंशजो ततकालविशिष्ट
और एतत्काल विशिष्ट अंश तिसके
त्यागने करकें दोनों विषे अनुगत जो
एकार्थचित अंशहै तिस करकें जो सा
मानाधि करण्यहै तिस करकें निर्गुण
ब्रह्मविषे पर्यवसान का तात्पर्य हो
ताहै १८ अस्थूलः मतनए ऐसे श्रुति
वाक्यों को अन्यत्तही उपाधी के निषे
धकरणे करकें ब्रह्मपरताहै उपास
नावाक्यों को अवर प्रयोजन के वा

रा॰ता॰
टी॰
११

ले प्रहरा इवे जो स्वाहि ग्रादिक ति
नों के ग्राश्रय करणे करके ज्ञानमाय
न जो ग्रामादिक तिनोंके विधान क
रणे करके निर्गुण ब्रह्मपरता प्रसि
द्धहै इसी वास्ते ब्रह्मविषे तात्पर्य के
संबंध होनेसे इस उपनिषन का व्या
ख्यान करणा योग्य ही होताहै ग्रव
र विवादके उद्भावन रूप ग्रतिप्रसंग
को ग्रलेका रहणे देणा ग्रवर वि
वाद कोई नही उद्भावना १९ ॥

मूल तत्र श्रीराम पूर्व तापनीये मंदाधिकारिणां
सगुणोपासनंनि र्गुणो पयिके चिन्मय इत्यादि
रूपयोः पनि षदानिरूपितं इदानी मुत्तमाधि
कारिणां कर्मसुतत्फलेचविरक्तानां संन्यासि
नां श्रीरामोत्तरतापनीयोः पनिषदा तदेवनि
र्गुणो पासनं सगुण फलभूतं निरूप्यते तामे
व श्रीराम ब्रह्मविद्याम ः विद्यापनोदि नीप्रक
टयितं कदाचितमिथिलोप वने जनको वैदे
होहस्पतिरुवाच याज्ञवल्क्य यदत्रक
र्तव्य १ ॥

ह्रासोचक्के नश्चयोगेश्वरो याज्ञवल्क्यः शि
ष्यसेवैसुनिगणैश्च परिवृत ग्रासते वृहस्पति
र्देव गुरु रुवाच याज्ञवल्क्यं यज्ञवल्कस्यापत्यं
मे यस्त्रसिद्धं प्रभु पश्यात् सर्वस्मादपि ऊर्ध्वं गु
णातिशय चरमकोटि निविष्ट सर्वोत्कृष्टं पु
ण्यफलमिति यावत् कुरुक्षेत्रं कस्मिन्ते येनीति
कुरु पापकर्म संसार हेतु भूतं तस्य क्षेपणात्
निरसनात् त्रानीति क्षेत्रं क्षेत्रेहि प्रवृद्धं तृणा
दि निरस्यतेयद्वा कुः पृथिवी देहाद्याकारपा
रिणता तस्यां रौति शब्दं करोति इति कुरुः प्रा
णः तस्य क्षेत्रं स्थानं कुनेः प्राणस्यनिवासस्था
ने तत्कुरुक्षेत्रं प्राणस्याऽधिष्ठान मित्यर्थः २

भाषा जब ऐसा सिद्धांत हुवा श्री ए
वरामतापनीय विषे भेद ग्रधिका
रियों को सगुण श्रीरामरूप ब्रह्मकी
उपासना निर्गुण ब्रह्म की उपाय हु
ई चिन्मयइत्यादिक रूप उपनि षत
करके निरूपण कीनी है अब इहां उ
त्तम ग्रधिकारियोंको कर्मोंविषे ति
नोंके फल विषे भी विरक्त हुवे संन्या
सियों को श्रीरामोत्तर तापनीय उप

रा॰ता॰
टी॰
१२

निषन करके सगुण उपासनाके फ
ल भून से निर्गुण की उपासना नि
रूपण करीदी है तिससे अविद्याको
दूर करणे वाली श्रीराम ब्रह्म विद्या
को प्रकट करणे कदाचित मिथि
लाकेबगीचे बिच जनकनामा विदे
ह राजा बैठरहाथा उसीही शिष्यस
महों और मुनिगणों करके परिवार
कीला याज्ञवल्कमुनि भी बैठाथा
उसको यज्ञवल्क के पुत्रको याज्ञ
वल्क को बृहस्पति पूछनारहा
जो प्रसिद्ध मनु का सब किसी मे
पिछला सबोंसे उपरला प्राणोंके
अतिशय का बड़वधी को उसकी
पर्यंत की काष्ठाविषे अस्थित जो म
होसे उचा प्राणोका फल जो है सो
ही कुछ होव कुशिन का वडी नि
दाखला जैसा होवे तैसा शाहको
करे सो कहवा कुछ संसारका कारण

12

हुवा पापकर्म जिसकाले का लय
करणा जिस करके ग्राकार लाकरणे
वाला सो हुवा कुरु क्षेत्र क्षेत्र विषे
भी आपही जमियाये घास आदि कों
को जमीदारी करणे वाले उरवाडके
हरकर ते हैं अथवा कुरुक्षेत्र शाह
का अवर अर्थ है कुकहिये देहके
ग्राकार करके परिणाम को प्राप्त हुई
पृथिवी जिस विषे रु क्या शाह कर
णे वाला प्राण है जिस शाह करणे
वाले प्राणके निवास का स्थान प्रा
ण का अधिष्ठान जो कुरुक्षेत्र है १

मूल देवनां इन्द्रियाणां तदधि ष्ठातृणां वा देवय
जने देवस्य स्वयं प्रकाशस्य आत्मनः योतनात्म
को तर्यामिणः श्रीराम चंद्रस्यतर्थः यजने प्र
जाधि करणे यत्रहीन्द्रियाणि विविधविषयोप

देवानां देवयजनं सर्वेषां भूतानां
ब्रह्मसदनं ॥ २ ॥

रा॰ता॰ टी॰ १३ ह्मरैः तेः पदार्थैर्य आत्मानं श्रीरामचंद्रं पूजयंति तथा च वार्त्तिककारः भोगाश्चैव मानते ति सर्वेषां भूतानां समष्टि व्यष्ट्यात्मकानां ब्रह्मसदने ब्रह्म श्री रामाख्ये देश काल वस्तुपरिछेद शून्ये तदेव सदनवत् निवास स्थले यद्विशेषण हय विशिष्टं कुरुते तं तकिमितिशेषः २॥

भाषा देव जो इंद्रिय औरतिनोंके अधिष्ठातृ देवहैं तिनोंका देव यजन क्या देव जो स्वयं प्रकाश आत्मा योनं तात्मक अंत र्यामी श्रीरामचंद्रका यजन क्या पूजा का आश्रय जिसबिषे इंद्रिय नाना प्रकार विषयों के उपहारों करके लेपट करके करे हुये श्रीराम चंद्र परमात्मा को पूजाकरते हे इसपर वार्त्तिककार कहताहे भो गजो हे सो तिस आत्माबिषे अवसान होताहे सब जो समष्टि व्यष्टिरूप जीव है तिनोंका ब्रह्मसदन क्या देश और काल और वस्तुके परिछेदसे र

13

हित श्रीराम ब्रह्म सोही चर म्याई निवा
सका स्थानहै जो इनौ दोविशेषणों
करके सहितकुरुक्षेत्र है सो का होता
है ऐसा अध्याहारकरणा का उपरे
लगावना २॥

मूल उत्तर माह अविमुक्तं अविद्या काम कर्मादि
भि र्मुक्त मध्य: विद्यादशायां मे वि मुक्ते वे प्रसिद्ध
ब्रह्म प्रकृष्णशाह्वाच्यं तत्र द्विविधं पूर्णं तत्पदं उ
पाध्युपलक्षितो रामः प्रविशयानप्रकः तथा उपा
धि धर्मान् आत्मनि मन्यमान आत्मापरस्य तद
के उपाधिरज्ञान मनादिसिद्ध मस्मिन्श्चिदा भास
नमीश्वर त्वम् उपाधि रंत:करणं त्वमर्थं जीव
त्व माभासन: मस्यतद्वदिति तद शोधित प
दार्थं द्वयभूते ब्रह्मैवकुरु क्षेत्रं देवानां देवय

अविमुक्तं वै कुरुक्षेत्रं देवानां देवयजनं
सर्वेषां भूतानां ब्रह्म सदनं तस्माद्यत्र क
चन गच्छति तदेव मन्येत तदविमुक्तमे
वेदं वै ३॥

जनं सर्वेषां भूतानां ब्रह्म सदनमित्यनु वाद:
परा ध्यद्वय परि शो धनेनेक रसेन ब्रह्मा व
स्थानेभव तियस्मात तस्मात यत्रकचन यत्र
क्कापि गंगाप्रयागादो तद्विपरीतेवा गच्छति

कुरुक्षेत्रादि रूपे पदार्थद्वयपरि शोधनेनहियस्मा
त् जंतोः पदार्थ द्वय सामरस्यमज्ञा ततः मुमुक्षो
प्राणेषु पंच प्राण ज्ञान कर्मे द्रियमनो सि षोड

कुरुक्षेत्रं देवानां देवयजनं सर्वेषांभू
तानां ब्रह्म सदनं मत्रहि जंतोः प्राणेषू
त्क्रममाणेषु रुद्रः ५ ॥

श्रा नेषूत्क्रममाणेषु: भिधानाभावेनविलीन
तेषुप्राणेषु सत्सु तथाच सर्वेने प्राणेगते यथा
देही सर्वं दुःखेनविन्दति तथा चेत्प्राणेषुक्कोपि
सकैवल्याश्रमे वसेदिति ईश्वरतत्वपदार्थो हिश
म एवाचार्यो भूत्वारुद्रस्तत्र दुःखं श्रावयति ना
शयतीति तथा आचार्य वाक्यरूपा वेदेतिश्रुतेः

भाषा कहे हुये विशेषणों वाला ही ॥ ५ ॥
है अवर कोई नंहींहै फेरभी इछना
वास्ते तिनोंही विशेषणों कोंदेताहै
तिस स्थलको ही अवि मुक्तको उप
चारकके उपचार क्या एक वस्त वि
षे अवरवस्तुका आरोपहोना तिसी
करके इछनाके वास्ते करताहै इस क
ह तेजो दिरूप अवि मुक्त विषे दोप
दार्थो के शोधन करके जिस वास्ते दो

पदार्थों की अवेदनताको नहीं जानने
वाले मुमुक्षजीव को प्राण क्या क
हिये पंच प्राण और मन और बुद्धि औ
र दस १० इंद्रियरूप सोला १६ जब
उनक्रम मान क्या कहिये अपने ना
म रूप त्यागने करके विलयको प्राप्त
होनगे तैसाही स्मृति विषे कहाहै
जैसा प्राणके निकलने विषे देही
जी वात्मा सुख और दुख को नहीं पा
वता जब प्राणों करके युक्त सो तैसा
ही सुख और दुखको नहीं जानेगा
तब केवलाश्रम क्या मोक्षपद तिस
विषे निवास को करेगा तिस अवस्था
विषे रुद्र तन्त्र दका अर्थ भून ईश्व
रही श्रीराम आचार्य रूपको धारण
करके तिस तिस दुखको नाश करणे
वाला रुद्र होता आचार्य वान जो पु
रुष होवे सोही जानताहै इसश्रुती
करके ४ ॥

रा॰ता॰
टी॰
२८

मूल तारकं तारात्म कत्वात् सर्वे स्मात्संसारभयात्ं
तारयतीतिवा तथा ब्रह्म तारकवि शेषण विशि
ष्टं ब्रह्म विद्या ब्रह्मात्मै क्य बोध कंमहावाक्यं श्री
राम मंत्र मितिपावत् व्याचष्टे कथयतियेन तार
क ब्रह्म जनित ज्ञानेन असौरुद्रानुग्रहीतोजीवः
अमृती अमृतो भूत्वा ब्रह्म स्वीयमि मानवा स्स

तारकंब्रह्म व्याचष्टे येनासा वमृती भूत्वा
मोक्षी भवति तस्मात् अविमुक्त मेव नि
षेवेत ॥ ५ ॥

मोक्षी भवति स्वेन स्वये ज्योतिः स्वरूप रामात्म
ना॰ वतिष्ठत राममंत्र रामयो वीच्य वाचकत्वेना॰
भेदात् हे तो॰यस्मादर्थे स्मात्ययः तस्मात् अविमु
क्तस्य शुद्ध त्वं पदार्थस्य निरु पाधि ब्रह्म रामात्म
नापत्ते: अविमुक्त मेव निषेवेत नितरां सेवेत
विजातीय प्रत्ययानंतरित सजातीय प्रत्ययप्रवा
हेण साक्षात् कुर्यात् ५ ॥

भाषा तारक को ओंकार रूप होने
सें अथवा सबही संसारके भय सें ता
रताहै तिस करके तारक विशेषण स
हित ब्रह्म को ब्रह्म और जीवात्मा
की एकता को बोधन करणे वाला
ब्रह्म विद्यारूप महावाक्य को अर्था
त श्रीराम मंत्र कों व्याख्यान करता

16

है जिस तारक ब्रह्मने जनाये ज्ञान क
कें इह आचार्यरूप रुद्रने अनुग्रह की
ना जीव अमृतहोके हमहीं ब्रह्महां इ
स अभिमान वाला मोक्षी होता अर्था
त अपने आप कर्के स्वप्रकाश रूप
परमात्मरूप कर्के निष्ठावाला होताहै
श्रीरामके मंत्रको अेर श्रीराम को वा
च्य अेर वाचकता केसंबंध कर्के अभे
दके हेत कर्के जिस कारण अर्थका
संबंध है तिसकारण अवि मुक्त जो
अद्वैत पदार्थको निरुपाधि जो ब्रह्म
श्रीरामहै तिस के साथ ऐकाकी प्रा
प्तिहोनेसे अवि मुक्त को ही भली प्र
कार से वर्णन करिये अर्थात विजाती
य भावों कर्के नही छपाया जोस
जातीय ब्रह्माकार अमय प्रवाहहैहै ति
स कर्के साक्षातकार करिये ५ ॥

मूल अविमुक्तं न विमुंचेत् यस्मिन्कस्मिन्देशे या
त्मानु संधानं नपरित्यजेत् तडक्तमाचार्यैः त्वंप

दार्थविवेकाय संन्यासः सर्वकर्मणाम् श्रुत्याविधी
यतेय स्मात्त्यागीय तितोभवेत् एवं शकुणायाज्ञ
वल्क्यस्य बुद्धिपरीक्षार्थं स्वस्य बुद्धि शुद्ध्यर्थेवा ए
हेन याज्ञवल्क्येन उक्तोर्थमीचकार बृहस्पतिः एव

अविमुक्तंनविमुंचेदेवमेतद्याज्ञवल्क्य
प्रथमः खंडः १ ॥

मेवैतदिति एतत्पदार्थ द्वयैक्य मेवाः विमुक्ते
कुरुक्षेत्रे देवयजने ब्रह्मसदन मिति पदार्थद्वय
शुद्धिं ज्ञातवतः आणात्युपाधि विलये ईश्वरान्तय
होम्य ब्रह्म विषया ब्रह्मात्मैक्य भवतीतिभावः
ब्रह्मैवसन् ब्रह्माप्येतीतिश्रुतेः १ ॥

भाषा अवि मुक्तकों नहीं त्याग देणा
अर्थात् जिस किसी स्थान विषे आत्मा
के अनुसंधान कों नहीं छोड़देणाते
साही आचार्योंने कहाहै त्वंपदका अ
र्थ जो जीवात्माहै तिसके विवेक वा
स्ते सब कर्मों का संन्यास श्रुतिने
जिसकारण विधान कीना इसीवास्ते
तिसत्वं पदार्थके विवेककों त्यागदे
णेवाला पतित का ज्ञान ओर कर्मसे
भ्रष्ट होवेगा इसी प्रकार बृहस्पतिने

रा॰ता॰
टी॰
१२

17

याज्ञवल्क्य की बुद्धिको परीक्षावाले
अथवा अपनी बुद्धीकी शुद्धिवाले
प्रश्नकीता जो याज्ञवल्क्य तिस भले
समाधान करकै कहा हुवा सो इहस
ति तिसके वाक्यको अंगीकार कर
ताहुआ इह ऐसाहीहै अर्थात इह परा
धिहृयका ऐक्यही कुरुक्षेत्र और देव
यजन और ब्रह्मसदन है इसकाता
त्पर्य इहजानना दोनो पदार्थो की शु
द्धिकोजाननेवालेको प्राणआदिक उ
पाधियों के विलय विषे ईश्वरके अनु
ग्रहसे उत्पन्नहुई ब्रह्मविद्या करकै ब्र
ह्म और जीवात्माका ऐक्यहोताहै इस
विषे ब्रह्महीहोके ब्रह्मको प्राप्तहोता
है इस अर्थवाली श्रुतिप्रमाण है ८

मूल यहाऽधिकारिणामनधिकारिणां सर्वेषा
मनुग्रहार्थं एकृति यत्र प्रसिद्धं अनु पश्चात् स
र्वत्र विहारार्थं विहरतां परं सर्व तीर्थेभ्य उत्कृष्ट
तमं भूमेरुत्तमांगमिति पावनं कुरुक्षेत्रं कुरु

ग॰ता॰
टी॰
१८

णा राज्ञा पालिते अनादि सिद्धे क्षेत्रे देवानां देवय
जने दैवैरिन्द्रादि भिरपिदेवः परमेश्वरेणामोग्य
त्र इत्यते सर्वे षां भूतानां ब्रह्मादि स्थावरांतानां
ब्रह्म सदने ब्रह्मावासि हेतु भूते तत् किं निशे
षः १ ॥

भाषा अब स्थूल बुद्धिवाले भक्तजनों
के निश्चय वास्ते अवर स्थूल अर्थको
कहता यहां क्या कहिये अथवा अधि
कारियों और अनधिकारियो सबोंके
अनुग्रह वास्ते बृहस्पति याज्ञवल्क्य
को पूछनाहै जोप्रसिद्ध अनु का धी
के तीर्थाटनकरणेवाले सबकिसी के
वजान को जावनेवालियें को परका
कहिये सब तीर्थोंसे बड़ा उत्कृष्ट पृथि
वीका सिरकू वाजो कुरु क्षेत्र का कु
रुनामक राजेने पालन कीता अना
दि सिद्ध जोक्षेत्र देवानां देवयजन का
रूवा इन्द्रादिकेदेवता भी जहां श्री
राम परमेश्वरका यजन करतेहैं स
ब जीव का ब्रह्म सेलेकर स्थावरके

18

नलक जितने जी वहैं तिनोंकाब्रह्म
सदन का ब्रह्मकीप्राप्तिका कारण
भूत जोऽइ नम क्षेत्र है सो कौन सा॰
क्षेत्र है इतना प्रश्नाहार करणा प्र॰
थीत इसवाक्य विषे संबंध कीसि
द्धीवास्ते इतना वर्णक करणा ७

मूल विशेषणद्वय विशिष्टं कुरुक्षेत्रमेव कु
रुक्षेत्रमन्यद्वे तिसंदेहे उत्तरमाह अविमुक्तं क
दाचिदपि विश्वेश्वरेण नविमुक्तं काश्यभिधं
वैतिश्चयेन कुरुक्षेत्रं देवानांदेवयजनं सर्वे
षांभूतानांब्रह्मसदनं यस्मात् अविमुक्तात्
उत्कृष्टतमंनास्ति तस्माद्यत्रक्कचन गच्छतिपं
चक्रोशेषु यत्र कुत्र विहिचरति तदेव तत्क्षे
त्रमेव मन्येतजानीयात् कथमित्यः सुता
प्रकारेणे तितत्प्रकारमाह इदं वै इद मेव कु
रुक्षेत्रं देवानां देवयजनं सर्वे षांभूतानां ब्र
ह्मसदनमिति अत्रा॰ विमुक्तेहि यस्मात् जं
तोः प्राणे मात्रस्य प्राणेषूत्क्रममाणेषु लो
कांतरं गच्छतः रुद्र॰ दुःख हानि करत्वात्
रोदनाद्वा रुद्रोमहादेवः तारकं ब्रह्म श्रीरा
म मंत्रात्मकं व्याचष्टे दक्षिणकर्णे कथय
ति तदाहविश्वेश्वरः श्रीरामंप्रति ८ ॥

गं.ता
टी.
१९

भाषा इनों हीविशेषणों कर्के मुक्त
यह कुरुक्षेत्रहै अथवा और कोई है
इस प्रकार संदेह विषे याज्ञवल्क्यजी
उत्तर कहता है अविमुक्त क्या कदा
चित भी विश्वेश्वरने नही त्यागी
जो काशीनामवाला क्षेत्र सोही नि
श्चय कर्के कुरुक्षेत्र है सोही देवोंका
देवयजन सबही भूतोंका ब्रह्मसद
न है जिस कारण अविमुक्तसे उत्कृ
ष्टतम और स्थान नहीहै तिसीकार
ण पांच ५ कोशोंविषे जिसकि सी
प्रदेशविषे विचरनारहे सो ही भूमी
का प्रदेश जानना किस प्रकार जान
ना इसपर जो प्रकार है तिस प्रकार
को कहताहै यह ही काशीरूप अवि
मुक्तही कुरुक्षेत्र देवोंकोदेवय जन
और सबोजीवोंका ब्रह्मसदन है
इस अविमुक्तरूप कुरुक्षेत्रविषे जि
सकारण जंतका प्राणिमात्र को

19

जिस समयविषे प्राणनिकल नेवाले
अर्थात परलोकको जावने वालेहो
नेगे तब रुद्र जो दुखोंको हटावनेवा
ला अथवा दुखों करके व्यामह्नरथोत्र
जाओंको देख करके रोदन करणे वा
ला महादेव तारक ब्रह्म का श्रीरा
म मंत्र को कहना अर्थात उसीवेले
आय करके सजेकान विषे जपना है
नै साही विश्वेश्वर श्रीराम के प्रतिक
हनाहै ८ ॥
मूल मुमूर्षो मेणिकर्णि का मर्डोदक निवासि
नः अहंदिशामिति मंत्रं तारकं ब्रह्म संततम् अ
नन्य जानकी नाथ परं ब्रह्मासिति चिंतामिति
येन तारक ब्रह्मविद्योपदेशेन असौ जीवः अम
तीभूत्वा ब्रह्मा स्मीत्यभिमान वान्सन्मोहो भवा
ति विदेह कैवल्यमापद्यते शुद्धांतःकरणस्य
वाचार्य रूपेण महेश हिदेहतो जीवन्मुक्त
तांचापादयतीति किंपुनर्निज रूपेण स्वसन्निधि
प्राणपलेशावशात् शुद्धता मुत्पाद्य विदेहतो वि
शिष्ट देहवतो भक्त वात्सल्येन गलगरला दिदे
हदानेन जीवन्मुक्ततांचापाद यतीति नात्र नार

रा॰ता॰
टी॰
२॰

तस्मात्तव स्याकरणस्तु विते उपदेष्टुः उपदेशश्चेश्वा
क्यस्य जलधि जलसंपोतवदुत्कृष्टत्वात् ५ ॥

भाषा मणिकर्णिका विषे अवीटक
नामकस्थान विषे बसने वालेमर
णोके संमुखहूवे प्रहव को हम म
हादेव नेत्रामेत्र जो तारक ब्रह्मनाम
वाला तिसके उपदेश को करताहों
हेतान की नाथहे राम इसीवास्ते त
मनिश्चय करके पर ब्रह्महो तिसता
रक ब्रह्म विद्याके उपदेश करके इह
जीव प्रसन्न होके अर्थात अहं ब्रह्म
अस्मि इस अभिमान वाला होके मो
दी होताहे अर्थात विदेहमुक्ति को
पावताहे शुद्ध अन्तःकरण वालेको
आचार्य के रूप करके उपदेश से वि
देहता और जीवन्मुक्तता कोभी सि
इकरताहे इहकयाहे अपने स्वरूप
करके अपने पासबैठनेके अर्थले

20

श केवश से शुद्धताको जनाय क
कैं विदेहता क्या कहिये विशिष्ट दे
हवता भक्तों के ऊपर प्रीति करकैं
विषकेपान करकैं नीलकंठरूप दे
हादिककेदान करणे करकैं जीव
न्मुक्तताकोभी सिद्धकरताहै इस
विषे ऊंचे नीचे आदिकतारतम्य
की अनवस्थाका करणा उचित न
हीहै अर्थात तिनोंको अपने तुल्य
एकरूपवालेयों को ही बनावना
है उपदेश करणे वालेको उपदेश
करणे के योग्य शिष्यों विषे समु
द्र केजल की छिटोंके न्याई बहुत
उत्कृष्ट होनेसे ५ ॥

मूल ज्ञानादेवतुकैवल्यमितिश्रुतेः नज्ञानमोल
भ्य मत्रैवयस्मात् तस्मादविमुक्त मेव निषेवेत
अस्मादरेणसेवेत अविमुक्तंनविमुंचेत् तेत्रसंन्या
से कुर्यात् अर्थांगीकारादाहयुरुः एवमेवतद्या
तवल्क्योति १० अधुनानिर्दिष्टस्यतारक ब्रह्मण

स्वरूप कथनार्थंयं द्वितीय कंडिकारभ्भते अथ
गुरुप्रश्न समनेंतर मेव श्रुति गौर वार्थं मनेयाज्ञ
वल्कं भरद्वाजऋषिः पप्रच्छ किं तारकं ब्रुवेंता

अथ हैनं भरद्वाजः पप्रच्छ याज्ञवल्क्य
किंतारकं किंतरतीति सहोवाचयाज्ञव
ल्क्यस्तारकं १ ॥

रकं ब्रह्मव्याचक्षे इत्येवोक्तं तदनु तत्स्वरूपमिति
तत पृच्छति किं तरती ति तरण विषय प्रश्नः इ
तिशब्दः प्रश्नद्वयसमाप्तौ नहि साधन फल प
रि ज्ञानेष्यः स्वज्ञेयम वशिष्यत इतिभावः ज्ञा
नेपरिसमाप्यत इति स्मृतेः सह याज्ञवल्क्य
उवाच प्राह तारकं १ ॥

भाषा ज्ञानसेही मोक्ष होताहै ज्ञात्वा
देवकैवल्यं इस श्रुति करके तिस ज्ञा
न की सलभता जिस कारण इसी
विषैहै तिस कारण अविमुक्तकोही
निषेवन करे आदर करके सेवन क
रिये अविमुक्तको नहीं त्याग दीजियें
प्रयोन उहांहीतेत्रसंन्यास कोंकरि
ये उसउपरंत अंगीकार करणे क
कें बृहस्पति कहताहै हेयाज्ञवल्क्य

वा॰ता॰
टी॰
२१

21

यह ऐसाहीहै ९ अब निर्देश कीते
तारक ब्रह्म के स्वरूप कहनेवाले
यहदूसरी कांडिका प्रारम्भ होतीहै
इस उपरांत यह स्तुतिके प्रश्नके पी
छेही बड़े गौरव वाले इस याज्ञव
ल्का को भरद्वाज नामा ऋषि पूछ
तारहा क्या तारकहै पीछे तमने
तारक ब्रह्म को हमकहेंगे इसी
प्रकार कहा तिस पीछे तिस का
स्वरूप कहना इस वास्ते तिस को
पूछताहै किसको तरताहै यहतर
णेके विषयकाप्रश्नहै इतिशब्दजो
है सो दोनोंप्रश्नों की समाप्तीविषे
है साधन और फल के ज्ञान विषे
भी अवर ज्ञेय का जानने योग्यपन
होरहताहै इसीवास्तेस्तुती कहती
है सबकछुज्ञान विषे ही समाप्त
होताहै सो याज्ञवल्का कहतारहा
तारकको १॥

ग्रं·ता·
टी·
२२

म्ल इति पूर्वोक्त मन्त्रस्य कथयति तार मितिपा
दे ॐकार पूर्वकमन्त्रमुक्तं भवति ॐकारस्य तारत्वा
भिधानात् तदुक्तं श्रीमदाचार्यैः ॐकारो गुणबीजं
प्रणवस्तारो ध्रुवस्त्ववेदादिः आदिम ध्योनम प
रो नामान्यस्य त्रिमात्रि कथनतया अस्यानवेदादि
ता सर्वमन्त्राणां प्रयुज्यते चादाविति दीर्घानले
दीर्घ आकार युक्तः अनले अग्निबीजं म्ल्ह

दीर्घानले बिंदुपूर्वके २ ॥

शेषदीर्घद्वयरहितानां दीर्घशाब्दवाच्यत्वेपि
प्रथमातिक्रमे कारणाभावादाकारस्येवाने
द पद निर्वाच्यत्वाच्च प्रकाशभूतेन अन लेन
आकारयो जन मेवाऽनवद्ये बिंदु पूर्वके बिंदुः
पूर्वं जन्मभूः बिंदोः सकाशात्पूर्वं जन्म यस्येति
वा बिंदुपूर्वं मेव बिंदुपूर्वके स्वार्थकः एवंत्व
त्र प्रक्रिया शाह्व स्हस्रे २ ॥

22

भाषा ऐसा पीछेक है इवे कोही
अनु बाद करके कहनाहै जब तारे
ऐसापद् मानोंगे तब ॐकार पू
र्वकता केही होतीहै ॐकार को
तार ऐसानाम होनेसे जैसाहीकहा
श्रीमान आचार्योंने ॐकार ओर गु
ण बीज ओर प्रणव ओर तार ओर

ध्रुव और वेदादि और आदिमध्यान्तम
पर और त्रिमात्रिक इत्यादि इस के नाम
हैं और इस को वेदका आदि होनेसे
सबही मंत्रोंके आदि बिषे प्रयोग हो
ताहै दीर्घानल का कहिये दीर्घ आ
कारसे हित अनल का अग्नि बीज
रकार जानना अरु और लजो शेष दी
र्घहै तिनोंसेबिना अवर आकार
ऊकार आदि कोंको जबभी दीर्घ श
ब्दवाच्यता है तोभी प्रथम जो आका
र रूप दीर्घ है तिसके लेणने बिषे
कारणके नही होनेसे और आकार
रूपदीर्घ कोही आनंद पद करके निर्व
चन करणे से प्रकाश रूप बना हुवा
जो अनल का अग्निबीज रकारहै ति
सके साथ योजना को निर्दोषहोने से
बहुत युक्त है बिंदुपर्वके का कहि
ये बिंदु है पर्व को जन्मभूमी जिस

शा॰ता॰
टी॰
२३

23

को अथवा बिंदों से एवं का जन्म है
जिस को बिंदु एवं ही बिंदु एवं कहो
ता इहां स्वरूप के अर्थ विषे ही कप्रत्य
य आया है इस बिषे इस प्रकार प्रक्रि
या जानती सो ही प्रक्रिया कहे जाती
है शब्द की सृष्टि वास्ते २ ॥
मूल सृष्ट्यादौ तमपदाय आसी दित्यनया श्रुत्या सत्
शब्दवाच्य अविद्याशबले ब्रह्मैवोक्तं तदीक्षणोन
न्मिन गुण वैषम्याकल रणावत् कृतशवा अ॰
विद्यासकला अव्यक्तं चेत्युच्यते ततः शब्दार्थ गर्भ
वती अवि द्याबिंदुः महत्तत्वं चेत्यभिधीयते मह
तोऽ हंकारः ततः पंच तन्मात्राणि तेभ्योऽ खिलं
जगदित्यः सृष्टिक्रमः बिंदोः नादः सच परा
पश्यंती मध्यमा वैखर्याख्या ऽमवस्था मनुभूय
स्वरवर्ण पद वाक्यात्मको भवतीऽति शब्द सृष्टि
क्रमः तथा हि परस्य ब्रह्मणः शब्दात्मनः चत
स्रोऽ वस्थाः समामनंति तत्त्वविदः आद्या ता
वत् परेति गीयते या खलु आद्या शक्तिः इति
शास्त्रैः ३ ॥
भाषा सृष्टि के आद्य विषे तम पदा॰
य आसीत इस श्रुति करके सत शब्द

का अर्थ जो अविद्या करके शबल ब
ह्महो कहाहै तिसके देखने करके लो
मको प्राप्तहुवे गुणां वाली अविद्या
फाटहुवा जोबीज तिस के दो फा
डों के न्याई शब्द को करणे वाली
सकल और अव्यक्त भी कहे जातीहै
तिससे अनंतर शब्द और अर्थ को
गर्भ विषे धारण करणे वाली इहो
अविद्या बिंदु और महत्तत्व भी कहे
जाती है तिस महत्तत्वसे अहंकार
होताहै तिस अहंकारसे पांच तन्मा
त्राहोतेहैं तिनां पांच तन्मात्रों से से
हर्ण जगत होताहै इह अर्थ सृष्टि
काक्रम है बिंदु सेंनाद होताहै सो
नाद परा और पश्यंती अरु मध्य
मा तथ्या वैखरीनाम वाली अव
स्थाको अनुभव करके स्वर और व
र्णो और पद रूप वालाबन ताहै

गं.ता
टी
२४

रह शाह सृष्टिका क्रम है अवन् पर जो बल है शाह स्वरूप तिस क्रियां वार अवस्थाही को कहते है शाह तत्वको जानने वाले तिनो विच ग्रा रि की जो अवस्था है तिस को परा इस प्रकार गायन करने है जिस प रा को ही शाक्त क्या शाक्ति को ही सकल जगत के कारण को मान ने वाले उपासक लोक आद्या शक्ति कहते है संपूर्ण विश्वके जीवन भू नमानका चक्र की प्रथमोत्थान भूत मूलाधारनिलय और विश्वके जीवन रूप को कहते हैं ३ ॥

मूल वित्ति रिति शैवैः कुंडलिनीति योगिभिः प्रकृतिरिति सांख्यैः ब्रह्मेति परा शरिभिः बुद्धिरिति बौद्धैः स्वशक्त्युन्मिषित गोत्वाद्यु पाधि रहिता महासत्तेति जातिवादिभिः न पाधिर्यापाधि रहिते केवले द्रव्य मिति द्रव्य

24

वादिभिः एका अनेकैः नामभिर्यद्वह्निपते
यंचोत्तरायामः वस्यायो निजैकाश्रय माया
ख्य शक्ति कल्पितानेकोपाधिभेद भिन्न स्वरू
पामावहते विवरणः ४ ॥

भाषा और शैव का जो चित्स्वरूप
स्वतंत्र और शक्तिचक्रका स्वामी शि
वही सेहरणी जगत का कारण इस
प्रकार उपासना वाले सो जिस परा
को ही चिति ऐसा मानते है चितिः
स्वतंत्रा विश्वसिद्धि हेतुः स्वतंत्र जो
चिति है सोही जगत की सिद्धिका
कारणहै ऐसा उनोंका सिद्धांत है
और जिस परा शक्तिको योगिजन
कुंडलिनी ऐसा कहते है जैसा मूला
धार से अभ्यासक्रम करके उत्थापित
कीनी सूक्ष्म प्राणशक्ति छे ६ चक्रों
कोंभेदन करके सुषुम्णानाडीके मा

यo ताo
टीo
२५

गी करके ब्रह्मरंध्र बिषेशिव के साथसे
गम पाय करके तिसके संगम से उ
मत्तहूवे परामृत करके सबचक्रसमु
दायको आप्लावन कर फेर अपने
स्थान पर चली आवती है और तिसी
को सांख्य का कहिये प्रकृति और पु
रुषका विवेक तिसको ही पुरुषार्थ
जाननेवाले सो तिसीको प्रकृति ऐ
सा जगत का उपाधान कहतेहै परा
पारी जो वेदांती तिनोने ब्रह्म जो एक
रूपता करके सर्वव्यापक और सर्व भा
सकहै सो पराही कहीहै और बौद्धों
ने सो ही बुद्धी ऐसी कहीहै और अप
नी अपनी शक्ति करके प्रकाशन को
प्राप्त हूवे जो गोत्र और मनुष्यत्व आ
दिक उपाधियां तिनों करके रहित
जो महासत्ता है सोही पराहै ऐसाजा

25

निवादियोंने कही ओर अविद्याकी
उपाधी से रहित शुद्ध केवल इयही
सो परा है ऐसी द्वयवादियों नेकही
है जो वस्तु विचार करके एकही है
अनेक नामों करके व्यवहार करी जा
तीहै जिस को आगे होवनीवाली
अवस्था विषे सो ही है एक आश्र
य जिसको निजमाया शक्तिने कल्प
नाकीतियो जो अनेक उपाधियों के
भेद तिनो करके भिन्नाभिन्नस्वरूप वा
ली को प्रबुद्धजनक हतेहै अर्थात
अनिर्वचनीय संद मात्र पराहोती
है ४ ॥

मूल यथाव प्रकाशा मध्या स्वाभिन्नतया वि
श्वप्रकाश्यते यस्ये वा अविद्या शाश्वतिकवि
रोधापि नित्यसन्निहिताापि द्वैतं नशक्नोति
यस्याश्च महोदन्वदंभस्तने विवाद विंदु संच
य इवो दवति प्रपंचः यस्याः किलाविः करणा

रा॰ता॰
टी॰
२९

नारा नारायणि नरणि ननूनपात् भस्मनयः
यस्मांच माया शक्ति निशायाम पगान नमसि
प्रभाता यास्मि सारः बुद्धो स्व स इव संलीयते
सैव पराख्या शक्तिः तोष्य माता सर्वोत्म्यि ते
वपदावि सर्वोत्मत्वो भवति तदापश्यंती स
प्तते साहितीया वस्था भण्यते यदा पुनः सैव
विमर्शापरवशा स्वाश्रयाः विद्याशक्ति परि
कल्पिते विवर्ते भूते सत्वानुस्मते अनादि वा
सनाः तुकूल समयानु रूपं स्वस्मात् अभि
न्नमपि भिन्न मिवविमर्शतीपदार्थ जाते मा
ध्य तरं बाचेव ५ ॥

26

भाषा प्रकाशैक रूप जिस पराने
अपने से अभिन्नता करके अर्थात्
प्रकाशरूप बनाय करके विश्व को
प्रकाश करीदाहै जिस को सदा हीवि
रोध करणे वाली और सदाही पास
होने वाली अविद्या रोह करणे को
अर्थात दबानेको नही समर्थ हो
तीहै जिससे बडे समुद्र की जलस
मुदाय से कनियोंका समूह जैसा
सब प्रपंच निकल आवताहै जिस

के बिन तारियोंके कन जैसे तार

क और चंद्रमा सूर्ज ग्रह अग्नि आ

दिक ज्योतिरूपुक्तहै मायाशक्ति रू

प रात्री जब विद्यारूप सूर्ज के उद

य करके तमसे रहित प्रभातजे सीहोवे

गी तद जिस पराबिषे सबही सं

सार रात्रीके अंत बिषे बुद्धीमें स

म जैसालय होता सोही परा नाम

वाली शक्ति जब बाहिर आवने

की इछा करके क्षोभ को प्राप्तहोवे

गी निद्रा से सत्वरी उठी हुई जैसी

जबविमर्श के संमुखहोती तदप

श्यंतीनामकाहृदय स्थान वालीक

ही जाती है अर्थात अपने में अभे

द करके विश्वकी कल्पना को करे

गी सो दूसरी अवस्था कही जाती

है जब फेर सोही पश्यंतीभाव को

प्राप्तहुई कल्पनासे पराशक्तिवि

रा॰ता॰
टी॰
२२

मर्शी के अधीन हुई अपने को आ
श्रित जो अविद्या शक्ति है तिस ने
बहुराया जो विवर्तरूप हुवा और
सभा करके काम और अनादिवास
ना के योग्य जो समय है तिसके
अनु रूप का सरीर अपने से अ॰
भिन्न भी बाहिरले और अंदरले अ
धीजात को भिन्न से को विमर्श
करणे वाली ५ ॥

मूल बुद्धिप्रतिभास लक्षणं रागादि दुःख
यांतः करणस्य संग्रहस्ताति नदामध्यमे
त्याऽऽख्यायते तीरनीया मवस्थामाहुः अ॰
सामेवाः वस्थायां परायाः शक्तेः यो विमर्शो
ऽ शः सवाचकः शब्दोऽभिधीयते यत्तविमर्शो
ऽ शः सवाच्योर्थ इतिव्यपदिश्यते यः पुनरे
कात्म्यावभासः सशब्दार्थयो वाच्यवाचकभा
वाख्यः संबंधो निगद्यते नन स शब्दार्थो संबं
धार्थ संबंधेयति सिद्धे शब्द सिद्धे अर्थो सिद्धे
नु विद्धत्वात् विमर्शणात्म प्रपंच प्रज्ञातता

या: प्रपंचस्य शब्द विवर्तत्वे सिद्धं भवति सैव यदा विमर्श विमृश्योभय भाव स्पर्शिनी ना: ल्वोष्ठादि स्थान विहनन संहननादि करण जनितैर्नादविशेषैः कृतसंस्कार योन्तः करण हृत्स्था क्रमवन्नादमयीव ९ ॥

भाषा इसी बुद्धि के प्रतिभास मात्र लक्षण पदार्थ जात को अंतःकरण कों रागद्वेष आदिकों करकें इष्ट हो नेसें समग्र को ग्रहण करेगी अर्थात प्रति बिंब जैसा धारण करेगी स्पष्ट भासमान कों भासावेगीतद मध्यमा ऐसी केदस्थानगान कहे जातीहे जिस को तीसरी अवस्था को कहतेहैं इसी मध्यमा अवस्था विषे परा शक्ति को जो विमर्श रूप भागहे सोवाचक रूप शब्द कहा जाताहे और जो विमर्श काविषय भाग है सोवाच्य का अ र्थ ऐसाकहे जाताहे और जो इनों दो नों शब्द और अर्थका एकरूपताका

शा॰ना
टी॰
२८

भासन सोही शब्द और अर्थका वाच्य वाचक भाव रूप संबंध कहे जाताहै तिसीकारणसे शब्द और अर्थ तथा संबंधों को अनादि सिद्धत्व है जैसा ही कहा महाभाष्यकारने सिद्धशब्दा र्थ संबंधे ऐसाकहा सिद्धही शब्द और सिद्धही अर्थ और सिद्धही तिनोंका संबंध भी है ऐसाही विमर्श नामवा ले शब्द करके व्याप्त होने से विमर्श्य का प्रपंचके भासन को शब्दकी वि वर्तता सिद्धहुई अर्थात संहरणे जो प्रपंच भासना है सो शब्दकाही वि वर्तहै सोहीमध्यमाभाव को प्राप्तहु ई पराशक्ति जब विमर्श का और विमर्श्य का अर्थ इनो दोनों की रू पता को स्पष्टीकरणे वाली तालु औ र ओष्ठ आदिकस्थानों और विचार से वार आदिक करणोंने जनाये नाद

28

विशेषों करके कीनेमस्कारवाली श्रे
नः करण हांत करके क्रम प्रकट ना
दवाली जैसी ६ ॥

मूल परिग्रहस्याने तदावैखरी त्याम्नायवि द्विग
म्नायते सावल्लथ वस्थाविंदोः तदके वैखरी
शाह् निष्पतिमध्यमाः श्रुति गोचरा उत्पत्त्यो
चपश्यंती सूक्ष्मा वागऽनपायि नीति ग्रन्तः
शाह् स्पष्टेः बिंदुरूपं कला हट कलिकानिदर्श
नेन बिंदु शिरस्के नार कार्ये बीजमुद्धरेत् म
कार श्चैतन्याः बयोतकोः स्तत्रूप श्चंद्रमाः
शिव श्चंद्रमास्तदा कारवान् बिंदु स्तयो जन
या प्रकाशाऽऽ तत्र विदा त्मकं बीजमुद्धते
भवतीत्यभिप्रायः बिंदुरूपं कमिति बिंदुग्रह
णे कलानादयोरुपलक्षणं ७ ॥

भाषा ग्रहण करीदी तदवैखरी इस
प्रकार जिह्वास्थानवाली वेद जान
नेवालियोंने कहीदीहै सो बिंदुकी
चौथी अवस्था तैसा ही कहाहै वैख
री जोहै सो प्रकट शब्दकी सिद्धि है
मध्यमा जो है सो नही श्रवणका वि

या॰ना॰ टी॰ २५ घणरहै पश्यंती जोहै सो अंदरवल प्र
थीके उदय वालीहै मध्यमावाणी जो
परा है सो अव्यक्त चिन्मात्र ओर नाश
से रहितहै इस बिषे शोबी प्रत्यक्ष अ
नुभव की सिद्धीवास्ते दृष्टांत कहते
हैं जैसा बड़के बीज बिषे विभाग
से रहित ओर अव्यक्तही बड़ वृक्ष
होता तैसी ही पराहै ओर जैसामयू
र अंडेके इस बिषे मयूर के आ
कार का थोड़ासा उल्लेखहोता तैसी
ही पश्यंतीहै ओर जैसा माहों की
फली बिषे दाने अंदर कलि प्रकार
बने हुवे बाहिर भी लभने आवते
परंतु भिन्नभी नहीहोते तैसी ही म
ध्यमा होतीहै वैखरी प्रकट लभने
वालीहै इसीवास्ते शब्द सृष्टि को बिं
दु सर्वकरहोनेमें वट वृक्षके दानेके
दृष्टांत करणे से बिंदु सिरवाला ना

29

रके मंत्रका आद्यबीज रं ऐसा उद्धा
र करणा बिंदुविषे मकार जोहै सो
चैतन्यका प्रकाश करणेवाला अम
त रूप चंद्रमाहै चंद्रमा शिवहै तिस
के आकारवाला बिंदु है तिसके मि
लावने करके प्रकाश ओर आनन्द अ
काविन रूप बीज रं ऐसा उद्धार की
ताहोता रेफ प्रकाश आकार विमर्श
रूप आनंद मकारात्मक बिंदु परा
रूपचित है इह इस आदि बीज के उ
द्धार विषे अभिप्राय जानना बिंदुश
ब्देके इस विषे बिंदुशब्द का ग्रहण
कला और नादका उपल क्षणहै अ
र्थात बिंदु करके बिंदु औरनाद भी जा
ननेचाहिए ७ ॥
मूल मतश्चबीज मस्तके नाद बिंदु कलाः प्रद
र्शयेत अतः अर्थे रहि वीचा शब्द रहिस्तवा
चिका तदुक्तं नसोस्ति प्रत्ययो लोकेयः शब्दा

रा॰ ता॰ टी॰ ३॰

तुगमाहने खलु विन्दुभिः व ज्ञाने सर्वेशाह्ने न भासते इति टीचीनले पुनःसमुच्चकन्वाहि इव हितं नदेव पुन रुद्रेन मायनम इतियो जना

टीचीनले पुन मायन मर्धेन्द्रायनमो भद्रायनमः ॥ ८

योघरद्दरं नारकस्वरूपं उक्तंभवति सर्वाजेन रामपदेन चंद्रायनम इति योजनीये नथाभ द्रायनम इतिच एवंमन्त्रत्रयं भवति ननु स॰ वीजेन राम पदेन चंद्र भद्र पदयो जनयाष्टा हर मंत्रद्वय सामानाधि करणा मंत्र त्रयम पि नारक ब्रह्म वियासधान न षडक्षर मंत्र रा जस्येवसर्वात्म कत्व प्रदर्शनात् ॥ ८

भाषा तिसीवास्ते मंत्रके बीज के सि र विषे नाद और बिंदु और कला कीं दिखलाइये इसीकारण सें अर्धेस हि जो है सो वाच्य का शब्द करके क हने वाली और शब्द सहित जिस को वाचक का कहने वालीहै नैसा ही मंत्रवालियांनेकहा सोकोई लोक

विषे अर्थ ज्ञान नहीं है जो शब्द के
ज्ञान सें बिना होवेगा सब ही ज्ञान
शब्द करकें ही वे ध्याजेसा भासता है
इस बीजके पीछे फेर भी दीर्घा नल
का आकार करकें सहितवह्निबीज
बिंदुके नही कहनेसे इहबिंदुसेरहि
त ही सोही फेर उद्दार करणा इस
पीछे जब माय नमः इस प्रकार यो
जना हुई तबछे अक्षरों वाला तार
क मंत्र का स्वरूप कहीता है और
बीजअक्षरके सहित राम पदके सा
थ माय नमः ऐसा मिलावना और
भद्रानम इस प्रकार भी मिलाव
नाचाहिए ऐसोतीन मंत्र होते हैं इस
उपर आक्षेप को पूर्व पक्षवादी कर
ताहे किमैं पूछताहों बीजसहित
रामपद के साथ चंद्र पद और भद्र
पद के मिलावने करकें आठ अक्षरों

रा॰ता॰
टी॰
३१

31

वाले दोमें ओंके साथ सामाना यि क
रणप करके क्या इकट्ठे कहने करके क्यों
नही तीन ही मंत्र तारक ब्रह्म विया
हैंन तो उत्तरवादी इस पर उत्तर देता
कि यह बात नहीहै क्योंकि छे अव
रों वाले मंत्रराज को सर्वा त्मकताके
देखाव नेसे ८ ॥

मूल ब्रह्मादीनां वाचकोयं मंत्रोन्वर्थादि संज्ञि
नः सर्ववाच्यस्वाच्य इतिच श्रीराम एवं तात्प
नीय श्रुति व्याख्याना वसरे सर्वा त्मकत्वं व्याख्या
ते सर्वेषां राम मंत्राणां मंत्र राजः षडक्षर इत्यः
गस्त्य संहितायां च अतः सर्वेषामेकाक्षरा
दीनां रामानुष्टुपमध्यानां सह स्राक्षरांतानां
श्रीराम मंत्राणां गणेशादि देवतांणांमक लदे
वतानांच अर्थ वाचकत्वेन सर्वात्मकत्वात्षड
क्षर राम मंत्र एव तारक ब्रह्मस्वरूपेणाभ्यादि
श्यते ९ ॥

ति तत्र उक्त मंत्रद्वयात्मक मेवाक्षरमहपठित
त्वात् न सर्व मंत्राणामुः पलक्षणार्थं त्वेनो
के: न केवलं सर्व प्रपंच कार्य मत तारक म
पात्याह इत्यौ इति इति श्रीमक प्रकारं षडक्षरं

तार के ॐ ॐकारात्मकं भवति न हि न स्मात
म ॐकार ॐकाराद्देन दयान्य न्नेमर्थः ९ ॥

भाषा ब्रह्मा आदिक देवतानेयोंको
वाचक इह मंत्रहै अर्थसहित सेत्ता
वालाहै और सब वाच्य जो अर्थ जात
है तिस का वाच्य का तात्पर्य रूप है
इस प्रकार भी श्री पूर्व रामतापनीय
की स्तुति के अर्थ करणे के समय वि
षे सर्वात्मकता इस को व्याख्यान
कीतीहै और सबही राम मंत्रोंके वि
च मंत्रराज षडक्षर मंत्रही है इस प्र
कार अगस्त्यसंहिता विषे कहा इसी
वाले सब जो एकाक्षर और अष्टाक्ष
र आदिकमंत्र और रामानुष्टुपके वि
चले जो सहस्राक्षर पर्यंत श्रीराम
मंत्र हैं और गणपति शिव सूर्य दुर्गा
दिनोंचार्योंका और सब हीदेवतोंको
का अर्थ को वाचक का कहने वा॰

रा॰ता॰ टी॰ ३२

ला होने कर्के सर्वात्मक होने से छे
८ अक्षरों वाला राम मंत्रही तारक ब
ह्म स्वरूपहै अवर कोई नहींहै फेर
पूछताहै कहे हुवे जो राममंत्रहै तत
रूप ही तारक मंत्र होवे कहेही पहि
ले होनेसें इहबात भी नहींहै सब मं
त्रों के उपलक्षण वाले उन्हों को कहे
होनेसें इहछे अक्षरोंवाला मंत्र केव
ल सब प्रपंचका कारण भूत ही न
हीहै फेरक्या है तारक ॐकार रूप
भी है इस अर्थ सो कहताहै इति ॐ
कर्के इति क्या कहे प्रकार वालाछे
अक्षरों वाला तारक ॐक्या ॐकार
स्वरूप है इस सेंभिन्न ॐकार
इह भी ॐकार से भिन्ननही है ८ ॥

32

मूल एवं यस्मात् तस्मात् ब्रह्मात्मकाःसच्चिदा
नंदाख्या इत्युपा सितव्यम परः पि मंत्रवर्णाः
ब्रह्मात्मकाः ब्रह्मवाचकत्वा ब्रह्म स्वरूपाः स

च्चिदानंदाख्याः सच्चिदानंद रामाऽ वबोधकत्वा
त् गौण्या हत्या तदाख्याः पंचवर्णात्मा सत्चि
त् आनंद बीजात्मकत्वात् वा इति ताराह्वयतारक
ब्रह्माक्षराणां ऐक्य संपादनेन षड क्षरं तार

तद्ब्रह्मात्मकाः सच्चिदानन्दाख्या रामपा
सितव्यः अकारः प्रथमाक्षरो भवति १

कमेवोपासितव्यं कृताधिकारिभिः साधन
चतुष्टय संपन्नैर्मुमुक्षुभिः परमहंस परि ब्रा
जकैः एतदेवार्थयुतः सर्वे जप्ये नोपा सितव्य
मिः ऋष्यः तदेव तार कयोः ऐक्यमाह अकार
इत्या दिना अकारः प्रथमा क्षरो भवति अकार
प्रणवावयवः प्रथमे अक्षरे राम मंत्रस्य भव
तिलिंग विपर्ययःछांदसः १ ॥

भाषा इसी प्रकार जिस कारण है
तिसीवास्ते सत चित आनन्द नामवा
ली ब्रह्मात्मक ऐसी उपा सना कर
णे चाहिए वे भी मंत्र के अक्षर ब्रह्म
स्वरूप ब्रह्म वाचक होनेसें ब्रह्म स्व
रूप सत चित आनंद स्वरूप राम के
बोधक होनेसें गौणीनामक लक्ष॰

रा॰ता॰
टी॰
३३

33

णा हनि करकै मन विन आनंद नाम
वालेहैं अथवा पांच अक्षरों का मन
विन आनंद बीजके आद्य होनेसे स
चिदानंद नामकहैं तार नामक तार
क मंत्र ओंर ब्रह्म रूप जो ओंकार है
तिनों कों एकताके बनाव करकै छे
अक्षरों वाला तारकमंत्रकी उपासना
करणीचाहिए इसविषे किया हुवा
है अधिकार तिनों को तिनों चारसा
धनसहिता मोक्षकोचाहने वाले
परमहंस परिव्राजकोंने अर्थ के
अनुसंधान को धारण करकै उपास
नाकरलेणी तिसी तारक मंत्र ओंर
ओंकारके एका का एकता को क
हताहै अकार इसवा का करकै अका
रजो ओंकार का प्रथम अक्षर अका
र रूप अक्षर सोही राममंत्रका प्रथ
म अक्षर है इसमूल विषे प्रथमाक्ष

ए: ऐसा कहने करके अक्षर शब्द
जो पुंलिंग निर्देश कीना चाहे तो
प्रथमाक्षरे भवति ऐसा नपुंसक
लिंग इह जो लिंगका विपर्यय
कीना इह वेदका है ऐसा वेद वि
षे होनाहीहै ए ॥

मूल नपोकारो द्वितीयाक्षरो भवति मकार
स्तृतीयाक्षरोभवति अर्धमात्र: वनयोक्षरो
भवति अर्धमात्र इत्यवयवत्वेन पुंलिंगत्वं
बिंदु: पंचमाक्षरोभवति नाद: षष्ठाक्षरोभव
ति सर्वार्थ वाचकत्वात्समासपि षड्यर्थ वाच
कत्वमितिशुभम् एवमुभयोरेकार्थवाचक

उकारो द्वितीयाक्षरो भवति मकारस्तृ
तीयाक्षरोभवत्य र्धमात्र स्तुर्था क्षरो
भवति बिंदु: पंचमाक्षरोभवति नाद:
षष्ठाक्षरो भवति ॥

वेन संख्या सामान्येन नाशस्य म: नु भय
सर्वावस्थास्वेनदेवो पासि तथ्य नाशस्य सि
द्धादिदोषानुक्ते: नाश: वयवानां मंत्राक्षरे
देकोन मंत्र गत सिद्धा दिदोषनिरासा इद

ए. ना.
टी.
३४

त्वारके वलप्याचक्षेत्वयमेव श्रुतिरपिकाति
नार तत्रं विते कटितिमात्ताल्का रफलायर्थं
परिहरति ॥
भाषा ऐसाही उकार हमरा अक्षर
है और मकार तो सरा अक्षर है और
अर्थ मात्र भी चौथा अक्षर है अर्थ
मात्र इस विषे भी अवये वरकेसा
थ संबंध करणे करके पुलिंगता
जाननी बिंदु पंचम अक्षर है ना
द छठा अक्षर है ऐसा विश्वरूप
अर्थके वाचक होनेसे छेही अव
यवों के अर्थ की वाचकता छियों
कों ६ है ऐसी सिद्धी अर्थ की हुई
इहतकल्याणा हुवा इसी प्रकार
दोनो को एकसही अर्थ की वाच
कता करके संख्या की सरीषी करके
तिसके एकस्वरूपताको अनुभव
करके सबही अवस्थाओं विषे इह
ही उपासनाकरणीचाहिए तारजो

ॐकार है तिसको सिद्ध साध्य आदि
करदोषोंके नहीं कहनेसे तारके अं
गोंको छह मंत्रके छह ८ अक्षरों के सा
थ प्र[illegible]कला करकें सिद्ध साध्य आदि
क दोषों के निवारण करणेसे हृद
तार क बलके उपदेश को करता
है आप ही श्रुति श्रुति कारियों के
तार तम्य को चित्त विषें साक्षात
कार रूप फल आदिकवाले सिता
बी हरावती है ॥

मूल एवंतारकत्वंसिद्ध वक्ष्य नारात्म कत्वाम
वे संसार भयतारणाद्धेति गच्छाभिसंध्यः भि
द्विने पूर्वोक्तेहेतद्वयं विहाणवती तारक निर्वच
नमाह तार कत्वात्तारकोभवतीति तारकात्म
कत्वादयं मंत्रस्तारको भवतीति अतो यथा य
उक्तं नदेवत्तानत्वेनान्य दित्याह नदेवेति अन्य

तारकत्वात्तारकोभवति नदेव तार कंब्र
ह्मत्वंविद्धि नदेवोपास मितिसेयं ॥

माह अथोंमः वयारणे नानुध्यायेद्बहू शाहाना

ता॰ ता॰
टी॰
३५

वोविन्ता पनेहि नरितिश्रुतेः विजातीय प्रवण
निषे धात् ज्ञानाच नदेवोपास्यमितिज्ञेयं श्रुत्य
न्तेत्रवाक्यानिचय विचारणे विहाय नदेव तार
कमेव उपास्य नद्य मिति स्वशिष्य शिक्षार्थं अ
वधारणे एवं ॥

भाषा ऐसाही तारकता को सिद्ध जै
सा बनाय कर्के तारजो ओंकार है त
त्स्वरूपही इस मंत्रराज को होनेसे
और सबही संसारकेभयों से तारण
करणेसे वा ऐसाही गूढ अभिप्राय
कर्के चिन्ह विषे अत्र संधान कीने
पीछे कहे हुवे दो हेतुओं को विव
रण करणेवाली श्रुति तारक पदकी
निरुक्ती को कहती है तारकत्वात इ
स कर्के तारकस्वरूप होनेसे इस मं
त्र तारक होताहै इसी वास्ते हमने
जो कहा सोही जानना अवर नहीं
जानना इस अर्थ को कहती है श्रुति
नदेव इस वाक्य कर्के इसविषे एव

शाद्ब करकें कहा ह्वा जो ग्रव धार

णा का सो ही ग्रवर नही ग्रैसा सो

ग्रवरमेंत्रो ग्रैर ग्रवर उपासनाहोंके

निषेध वाले है नानुध्यायेन इस श्रु

तीसे इसका ग्रर्थ इहहै बह्नत शाद्बों

को नही ग्रनु संधान करणा कोंकि

सो बह्नत शाद्बोंका ग्रनुस्मरण वा

णी को विलेप जनावताहै इस श्रु

तीसें विजातीय ग्रवण के निषेध

करणोसें जान के भी सोही उपास

ना करणा ग्रैसा भी जानना ग्रवर

मेत्र वाका समूह के विचार को छो

ड के सो ही तारक ही उपासना कर

लेणा ग्रैसाही ग्रपने शिष्यों की शि

क्षावाले पद शाद्ब करकें ग्रवधारण

कीता ॥

मूल एवं प्रथमहेतने वि विच्य द्वितीयमाह गर्भे

ति गर्भ जन्म जरा मरण इपात्संसार महद्भयात्सं

तारयतियस्मादेवं तस्मादुच्यते तार कमिती ति

किं तारकमिति प्रश्नस्योत्तरं मुक्त्वा किं तारतीत्य
स्याह यदुक्त्वा हिक्कां डिकांते यत्पतन्नारकं ब्राह्म
णो नित्यमधीयत इति यो ब्राह्मणः पाठितत्ये ति

गर्भ जन्म जरा मरण संसार महद्भया त्सं
तारयतीति तस्मादुच्यते तारकमिति यत्प
तन्नारकं ब्राह्मणो नित्यमधीते समर्वं पा
प्मानं तरति समस्तेन तरति ब्रह्महत्यां त
रति सभ्रूण हत्यां तरति स वीर हत्यां तरति
सर्वहत्यां तरति स संसारं तरति सोविमु
क्तो मुक्तात्मा श्रितो भवति ॥

36

विश्वबालेन नित्यासीदित्यादि श्रुत्युक्तो ब्राह्म
णः ब्रह्मब्रुभन्त्यारि नियावत पतन्नारकं अधी
येन अर्थानुसंधानेन केवलमपि वा नित्यजप
नित्यपाप्मानं तरति पाप्मन एव समविशेषणा
त्याह समस्तमित्यादि तारक ब्रह्मध्यानेन पा
प्मानं तीर्त्वा यत्साक्षी ति तदाह सो विमुक्तमिति

भाषा इसी प्रकार पहले हेतु को
विवरण करके अब हमरे हेतु कोक
हना है गर्भ इस करके गर्भ और ज
न्म और जरा और मरण रूप संसार
के बडे भयसे भली प्रकार तारण क

रना है जिस कारण तिसी कारण
करकें नारक ऐसा कहे जाता है क्या
नारक है इस प्रश्न के उत्तर को कहे
करके किसको तरता है इस प्रश्न के
उत्तर को कहता है यपनत इससे ले
के कांडिका के अंत तलक जो ब्राह्मण
इस नारक को नित्यप्रति पढेगा बाल
ण का होना प्रवृद्धतासे अर्थात ब्रव
हारकी चतराई से वैराग्य को प्राप्त क
र्के मौन ब्रह्मरूपबालक पना करकें ट
हरणे को इच्छा करेगा अर्थात ब्रह्मके
जानने को चाहने वाला इस नारक में
त्रको अर्थ के अनुसंधान पूर्वक पाँके
वलको नित्य जपेगा सो पाप को त
रता है पाप के होसात ७ विशेषणों
कोंकहता है मत्सुइस से लेके नार
कब्रह्म के ध्यान से पाप को टपके
जिसको भ्रामहोता तिस को कहता

रा॰ना॰
टी॰
३७

है सो विमुक्त इस करके ॥

मूल सो॰ विमुक्तात्माश्रितो भवतीति अविमुक्तस्य
य आत्मास्वरूपं प्रथमकांडिकोक्ते विशुद्ध ब्रह्मणः
अविमुक्ताख्यकाश्यावास्वरूपे ब्रह्म लोकं तदे
वाश्रित्य वर्तते यतिष्ठति तारक ब्रह्मोपासकस्य
यत्ने ब्रह्माश्रयण मेवभव तीतिभावः तदुक्तं भग
वता श्रुतिकेतः स्थिरमतिरिति अविमुक्तमाश्रितो
भवतीतिपाठे निरस्त समस्तोपाधिके ब्रह्मात्मस्व
समहात्मभवति सोऽमृतत्वंचगच्छतीति ॥

रूपम विमुक्तशब्देन लक्षणयोच्यतेनमाश्रितो
भवति तद्रूपोभवतीत्यर्थः समहात्मभवतित्रैलो
क्य पूज्योभवति सो मृतत्वंचगच्छति निरावरणकै
वल्यमाप्नोति अविमुक्तात्मामृतत्व परयोः जीव
न्मुक्ति विदेहमुक्ते भेदेनार्थभेदो ज्ञातव्यः अस्य
मेवस्य महिमानं भगवान्भवानी वल्लभभव प्रियः
परमात्मा श्रीरामचंद्र एवजानाति नेतरः इति
शाह: अश्नहृदयस्यान्तरहृदयममामो ॥

भाषा अविमुक्तका जो आत्मा का स्व
रूप प्रथम कांडिका विषे कहा हुवा
विशुद्ध ब्रह्म है तिस को अथवा अवि
मुक्त नाम वाली काशी का जो स्वरूप

ब्रह्म और जी वात्माका ऐक्य तिसको
प्राप्तिनहो करके अर्थात भली प्रकार
के स्थितिको पावेगा तारक ब्रह्मके उ
पासक यतीको ब्रह्मका प्राप्तपणा ही
होताहै इह इस विषे तात्पर्य जानना
जैसा ही भगवान ने कहा अनिकेतः
स्थिर मति स्थिति अनिकेत का आकार
आलंबन से रहित और स्थिर निश्चय
वाला भक्त हमाराप्याराहै अविमुक्त
प्राप्तितो भवतिऐसा जबपाठकोमानो
तबतब छोड दितीसब उपाधि जिसने
ऐसा ब्रह्मात्म स्वरूप अविमुक्त शब्द क
के लक्षणा वृत्ति करके कहे जाताहै ति
स को प्राप्तिहोना तत् रूपही होना
है सो बडा होताहै तीन लोकों विषे
पूजाकेयोग्य होताहै सो परमतत्व का
निरावरण कैवल्य को प्राप्त होताहै
अविमुक्त पद और परम तत्व पद को

रा॰ता॰
टी॰
३८

क्रम करकें जीव न्मुक्ति और विदेह मु
क्तिके भेद करकें भेदज्ञानना इस मंत्र
के महिमा को भवानीपति महादेव
का प्रिय जो भगवान श्रीराम ही जा
नता अवर कोई नही जानताहै इति
शाह जोहै सो दोय श्लोंके और दोनो उ
मरों की समाप्तिविषे जान ना ॥

38

मूल प्रथम कंडिकयानिर्दिष्टस्य तारकब्रह्मलक्षण स्व
द नंतरितया तारतारकै कोन तत्स्वरूपं प्रदर्श्य
स्तीयथानस्य वाच्य मऽर्थमः मि नयहाव्यवाचक
यो रैक्य कृपातिशय त्वेन स्वयमेवाह याज्ञवल्क्यः
नत्र किं तारकं किं तारती ति स श्रावैनि रूपणो न
वाक्य स्या पत्रीणत्वादतोः ३९ मध्ये कथन मको
प्रयेते स्रो काभवंति ॥

इतोऽश्विनम् न वक्तव्यानामनंतत्वात् किंतारक
मिति प्रश्नस्यैव शेषाऽवशिष्टत्वात् नहि वाच्य मे
नरेण वाचकस्य पर्यवसाने दृष्ट श्रुतेवा अनन्त
स्य वार्थ कथ नमाह अथेति अथ तार कस्वरूप
कथना नंतरं तदर्थभूता पने श्रुति प्रसिद्धा वस
माणा अवतारः श्लोका भवंति ॥

भाषा प्रथम कंडिका करकें निर्देशा
कीने नाटक ब्रलको तिसकेही पाम
होने वाली दूसरी कंडिका करकें ठौका
र और नाटक मेदकी पकना करकें ति
स के स्वरूप को दिखाय करकें तीसरी
कंडिका करकें तिसकावाच्य जो अर्थ है
तिस को अभिनय करकें दिखावनवा
ला अर्थ और शाहकी पकना को रूपा
के अतिशय करकें आपही याज्ञवल्क्य
मुनि कहतारहा हम पूछताहो क्या
नाटकहै किसकोनरना है इस प्रश्नके
अर्थ के निरूपणकरणे करकें वाक्यको सकेहोइ
समाप्त होनेसे अबनहीं अर्थकाकहना
अप्रस्ताव विषै नाच जैसाहै इहजवाब
मकहोंगाइसडने उत्तरको देनाहो इह
ननहीहै क्यों वक्तव्यजो कहने के यो
ग्य अर्थ है तिनोको अनेन होनेसे क्या
नाटक है इसी प्रश्न केही शेष अर्थको

रा॰ता टी॰ ३५

बाकी होनेसे जिसकारण वाच्य के
बिना वाचकजो शब्दहै तिस को स
मार्थी नहीहेसो हुई अथवा नही स
नी हुई उसीवास्ते तिस के ही अर्थ के
कथन को कहताहै अथैने इस कर्के
अर्थ का कहिये तारक स्वरूप के क
हने से पिछे तिसके अर्थ भूत इस श्रु
तिविषे प्रसिद्धहोही कहने आवने
वाले चार श्लोक है अर्थात इसी अर्थ
को प्रकट करदेणेवालेचार श्लो कहै

39

मूल अकारस्यात्मा वक्तं चन स्मिन्संभूतः सम्यग्ज्ञा
नः अर्थं स्हेः पश्चाज्ञाविना दकारेणाऽ विभाविनः
अकारवाच्योऽ कारार्थ इतियावत् सौमित्रिः स्हमि
ज्ञात्मतोलक्ष्मणो विश्व भावनः जाग्रदवस्थायां वि
श्वं भावयति संकल्पयतीति तथा जाग्रदवस्थात्मा
सान्माविश्व इत्यर्थः तथो कार म करार्थ माज्ञार्थः

अकारान्तर संभूतः सौमित्रिर्विश्वभावनः
उकारान्तर संभूतः शत्रुघ्न स्तैजसात्मकः
प्राज्ञात्मकस्तुभर तोमकारान्तर संभवः

अर्धमात्रात्मको रामो ब्रह्मानंदैकविग्र
हः श्रीरामसान्निध्यवशाज्जगदानंदकार
कारिणी ॥

रामरहस्ये तृतीय सात्विकास्तेनस प्राप्त आ
नन्दाः शत्रुघ्न भरत रामा ज्ञातव्याः तत्र ब्रह्मा
नन्दैक विग्रहः ब्रह्मचा सा: वानन्दश्चेति सप
व एको विग्रहः शरीरं यस्य सतथा श्रीराम
सान्निध्यवशात् राम पदस्य श्रीपूर्व कत्वे भक्ता
ति शयाधानार्थं रामसाक्षात्कार सेवपरम पु
रुषार्थत्वोपपत्तेः ॥

भाषा अकारही इह जो अक्षर भी है
तिस विषे संभूत क्या भले उत्पन्न
हुवा अर्थ सृष्टीको पिछे उत्पन्नहो
ने करके अकार अक्षरने प्रकट करा
य दिना अकार कावाच्य अकार
का अर्थ जेसा ताल यीहै सौमित्रि
क्या कहिये सुमित्राका पुत्र लक्ष्म
ण विश्वभावन क्या जाग्रत अवस्था
विषे विश्वको भावन क्या संकल्प
करणेवाला अर्थात् जाग्रत अव

रा॰ता॰
टी॰
ध॰

स्या को साक्षी आत्मा विश्वनामक है
ऐसा उकार और मकार और अर्धमा
त्रा के अर्थ हुये स्वप्न और सुषुप्ति
और तुरीय के साक्षी हुये तैजस औ
र प्राज्ञ और आनंद नामक शत्रुघ्न
और रामज्ञान ने चाहे तिनो विषे ब
ल्लानंदैक विग्रह क्या कहिये ब्रह्म
ही जो इह आनंदभी है सोही है ए
क शरीर जिस को श्रीरामसान्निध्य
रसवाक्य विषे रामपद को भी शा
ह्यवक्ता करता जो है सो भक्ति
की बधाकी के देनेवाले है रामके
साक्षात्कार को ही परम पुरुषार्थों
की उपपत्ति का योग्यता होनेसे

मूल टीका एतदः त्वं गार्ग्यविदित्वा अस्माल्लो
कात्प्रैतिसकृपणः योन्यथासे नमात्मान मन्य
थाप्रतिपद्यते किं तेनन कृतं पापं चौरेणात्मा
पहारिणोति श्रुतिस्मृतिभ्यो परम पुरुषार्थोः
श्रयत्ने निराश्रवणाद्व तस्य ब्रह्मानंदवि ग्रह॰

सा श्रीरामस्य सान्निध्यं मामा स्वयः लौकिकमा-
पात्र तथा स्वया आमोह करवेन स्वस्यवाजन सव

उत्पत्तिस्थितिसंहार कारिणी सर्व देहिना
म् साक्षीता भवति सेया मूल प्रकृतिसंज्ञि
ता ॥

उत्वेन तदा स्वयणे तद्वशावे वनानुवि नमतः सा
न्निध्यवशात् चिदाभास बललाभात् जगदाकार
कारिणी जगतः आकारस्तंकरोति तथा उत्पत्तीति
सर्व देहिनां सर्वेषां देहिनां आकारिनानो तेषां
उत्पत्त्यादिकारिणी पात्र मूल प्रकृति संज्ञिता मू
लप्रकृति रविकृति रित्युक्तनाम्नी साक्षीतेति से
याभवति ॥

भाषा याका पनदहरे इसश्रुतीका अ
र्थ इहहै हे गार्गि जो पुरुष निश्चय
करकें इस प्रकार का अविनाशी आत्मा
को नही जानके इस लोकसे चलेजा
वैगा सो कृपणजानना अर्थात् परि
मित कर्मोकेफलका भो क्ताहै और जो
अवर प्रकार का सन चित आनंद अ
विनाशिरूपता करकें होने वाले आत्मा
को अन्यथा का अस्तत जर इसविना

रा॰ता॰
टी॰
४२

शि अपना करके जानैगा तिसने आत्मा
कोही हराव नेवाले चौरने क्या पाप
नही कीना अर्थात सबही पापकीना
इस श्रुति और स्मृति करके परम पुरुषा
र्थ जो स्वरूप लाभ है तिसबिषे नही
प्रयत्न करणे में निंदाके श्रवण से
भी सोजो ब्रह्मानंदविग्रह श्रीराम
तिसका सान्निध्यक्या आश्रय जान
ना लौकिकमायाके न्याई अपने आ
श्रय को नही मोहजनावने करके अ
पने को वाजडता करके तत आश्रयण
क्यातिसकी वशवर्ति तानही अप्रुक्त
है जगत का आकार का स्वरूप ति
स को करणे वाली और सब होदे ह
वालियांको उत्पत्ति और स्थिति और
सं हार को करणे वाली मूल प्रक
ति जो अविकृति का विकारसेर हित
प्रेम करे नामवाली सो सीता जान

41

नीचाहै ॥

मूल प्रकृति निर्वचनमाह प्रणवत्वादिति तुस्य
ना विम्बस्य धातोः प्रणयने प्रत्नयने महदाद्याका
र निर्माणे यया सा प्रणवा तस्या भावस्तत्त्वं तस्मा
त् प्रणवत्वात्प्रकर्षेण क्रियते नयेति प्रकृतिः
ब्रह्म प्रणव मूलो वेदस्तद्वदन शीला विचारपरा
वदंति कथयंति मायाः यके प्रकृतिः सीतेति
र्षयो याः तथा च रामायणे श्रीरामं प्रति कालो
क्तिस्तु पति वंबयादिकवि भगवान् वाल्मीकिः

प्रणवत्वात्प्रकृतिरिति वदंति ब्रह्मवादि
न इति ॥

संक्षिप्यादौ परोक्षे काले कल्पमायया सह भार्य
या शुभयादृश्यामात्वेवपूर्वं मजीजन इति नाग्रत्स्व
स्तस्मि तरीयसाहिबे नोक्ताः विम्बेनेनस प्राते
स्वराः सौमित्रि शत्रुघ्न भरत रामा स्तेषा मेकोप्य
नेकत्व कथन मिमेतावानेव स्थूल सूक्ष्मः सर्वः
प्रपंचः ॐकारात्मकस्य तारक ब्रह्मणोर्थ इत्यु
पसंहृतावितिशाहः ॥

भाषा प्रकृति पद की निरुक्ति को क
हता है प्रणवत्वात इस करके तुरीयतो
रम धातसे प्रणयने का प्रकर्ष क
कै रचनाकरियेमहत तत्व आदि कके

रा॰ता॰
टी॰
४२

आकार का बनावना जिस करके सो हु
ई प्रणवा तिसका जोभाव क्या तत
तिसी प्रणवनामे प्रकर्ष करके कहि
ये जिसने सो हुई प्रकृतिः ब्रह्मस्वरू
प प्रणव का ओंकार है मूल जिस
कोसो जो वेद है तिस के वदन शील
का विचार बिषे लगे हुये कहतेहैं
माया और प्रधान और प्रकृति औरसी
ता इह पर्याय का एकमही अर्थको
कहने वाले नाम हैं तैसाही रामाय
ण बिषे श्रीरामके प्रति कालकी उ
क्तिको भगवान वाल्मीकि मुनिनिबे
यकरनारहा आदिकालबिषे सब
लोकोंको संहार करके एकहीतम॰
बना फेरदेवी जो कल्याण स्वरूप
मायानाम वालीभार्याहै तिसके सा
थ अर्थात तिस के संग को प्रामहो
करके प्रथम हम को जनावना रहा

जाग्रत और स्वप्न और सुषुप्ति और तु
रीयकी साहिता करके कहे हुये जो
विश्व और तैजस और प्राज्ञ और ईश्व
र सोही लक्ष्मण और शत्रुघ्न और भर
त और राम तिनोंको एकता विषे
भी अनेकता का कहना जो है सो ही
इनका स्थूल और सूक्ष्म सबही प्रपंच
ओंकारात्मक तारक ब्रह्मका अर्थ है
इसकी समाप्ति विषे इति शब्द जान
ना ॥

मूल तत्त्वकारादर्थ संभूत इत्यादिना ओंकारस्यै
वार्थः प्रदर्शितः तत्र षडक्षर तारकस्येति चेत्
तार तारकयोरऽभेद प्रदर्शनात् एवं मोंकारा
त्मकत्वेन षडक्षरतारके ब्रह्मप्राधान्येनोपासि
तव्य मित्युक्त मिदानींतारक षडक्षरात्मकत्वेन
ओंकारस्य प्राधान्येनस्तुव्यते तत्र ब्रह्म वादिरह
स्याभिप्रायः प्रायः प्रकारः द्विती यस्तत्र वत्तर्या
मभाऽभिप्रायेण इदानीं मोंकारोपासनया क्र
मेणमुक्ति प्रकार माह ओं इत्येनदक्षरादिना या

ओं इत्येतदक्षरं मिदंसर्वं ॥

रा॰ ता॰
टी॰
५३

वकारादि कासमाप्ति ओंइत्येतदक्षरं सर्वं सर्ववाच्य
मर्थं जातं ओंइत्येतदक्षरं ओंकारस्वरूप मेवाक्षरं ब्रह्म
स्वरूप श्रीराम परमार्थ वाचकत्वात् अक्षरे सर्ववा
गात्मके ओंकारे भावाः भावात्मके सर्वार्थ वाच्य
वाचकत्वेनाः समं जसमिति वाच्येव ओंकार इति
यथाशंकुनासर्वाणिपर्णानि संतृणान्येवं ओं
कारेण सर्वावाक् संतृणेतिवा ॥

भाषा फेर आक्षेपको उठावताहै हम
पुछताहो अकाराक्षर संभूत इत्या
दिक वाक्य करके ओंकारकाही अर्थ
दिखाया नहीनछे ६ अक्षरा वाले
तारक मंत्रका ऐसाजबक होगा सो
बात नहींहै क्यो ओंकार और तारक
मंत्र को अभेद के दिखावने मे पहले
न ओंकारात्मकता करके छे अक्षरं वा
ला तारकब्रह्म प्रधानता करके उपास
ना करलेणा ऐसा कहा अबत तारक
छे अक्षरवाले मंत्र रूपता करके ओंका
रकी उपासना प्रधानता कहदीहै ति

नोंदों प्रकारों विच ब्रह्म चारि और
गृहस्थ के आश्रम प्राप्त वाला पहला
प्रकार है दूसरा प्रकार चौथा आश्र
म जो संन्यासाश्रम है तिसके आश्र
प्राप्त करके है अब ओंकारकीउपास
ना करके क्रम करके मुक्ति के प्रकार
को कहता है ओं इत्येतत् इस करके स
ब जो वाच्य का अर्थजात है सो ओं
कार रूपही अक्षर है अक्षर रूप श्री
राम परमार्थ को वाचक होने से अ
क्षर जो सब वाणी स्वरूप ओंकार है
तिस ओंकार विषे भाव और अभाव
रूप जो सब पदार्थ रूपवाच्य है ति
नोंकीवाचकता अर्थोंपनहीं है इह
वाणी ही है ओंकार ॥
मूल ओंकारो वै सर्वा वागिति श्रुतिभि रोंकारस्य
सर्ववागात्मकत्वमः भिधीयते ओंकारेणाःवभा
समा नत्वा त्सर्व मोंकारात्मक मेवेति त्ताने सति
कथं परमार्थो वाग्भिरिः त्याःत्त आहतस्योपव्या

रा॰ ता॰
टी॰
४४

ख्यानमिति तस्य परमार्थ प्रकाशकस्य ॐकार
स्य उप अक्षररूप श्रीराम प्रतिपाद्य पायत्वाद्दत्तर
रूप श्रीराम सामीप्येन व्याख्याने विस्पष्टे प्रकट
कथने जानीयात् इति शेषः कस्मात् मन्त्र आह भू

तस्योपव्याख्यानं भूतं भव्यं भविष्यदिति
यच्चान्यत् त्रिकालातीतं तदप्योंकार एव ॥

तेभव्यमिति कालत्रयपरिच्छिन्ने समष्टि व्यष्ट्या
त्मके विराट् हिरण्य गर्भरूप मोंकार एवेति त
द्धि कालत्रयातिक्रान्तस्य ॐकारात्मकत्वे तस्मा
दित्यत्र आह यच्चान्यत्त्रिकालातीतं तदप्योंकार
कार्यैक समधिगम्यं कालत्रयाना कलितं मऽ
व्याकृतादि तदप्योंकारएव ॥

भाषा इस प्रकार कहनेसे ॐ और जैसा
कील करके सब पत्ते प्रोहे होते ऐसा
ही ॐकार करके सबही वाणी प्रोही
है और ॐकारही सब वाणी है इत्या
दिक श्रुतियों करके ॐकारको सब
वाणी स्वरूपता कहे जाती है ॐकार
करके प्रकाशमान होनेसे सबही ॐ
कार स्वरूपही है ऐसा जब इयानव

44

कैसा परमार्थकी प्राप्तिहोवेंगी
इसवास्तेकहताहै तस्योपव्याख्या
ने इसकरिके परमार्थ प्रकाश
क ॐकारका उपका स्वतर रूप
श्रीरामके ज्ञान के उपाय होनेसे
स्वतर रूप श्रीराम की समीपता
करके व्याख्यान का विस्तार करके
कथन जाननाचाहे इह प्रव्याहा
र करणाचाहे कैसा जानना इस
वास्ते कहताहै भूतं भव्य इस प्र
कार तीन कालो करके परिछेद
कीताजो समष्टि और व्यष्टि स्वरू
प विराट् हिरण्यगर्भ रूप सो स
ब ॐकारही है तत तीनकालो
अतीत जो अव्याकृत है तिसको
ॐकार स्वरूपता नही होवेंगी
इस वास्तेकहताहै यच्चान्यत ऐसा
वाका करके जो अवर भी तीन का

रा॰ ता॰ टी॰ ४५

रोसे अतीत सोभी ऊँकारके का
र्यके साथ जान ने आवनवाला
तीन कालोने नही कलना की
ता अव्याकृत आदिक सोभी ऊँ
कारही है ॥

मूल एवं कार्य कारणरूपस्य सर्व प्रपंचस्य
वाच्यस्य वाचकत्व मोंकारे प्रदर्शिते वाच्य
वाचकयोः भेदात् परमार्थ रूप श्रीरामावा
भिन्नत्वादित्यनतयोरभेदं दर्शयति सर्वंह्ये
तद्ब्रह्मेति सर्वं कार्य कारणात्मके वाच्ये वा
चक मोंकारे परादि वाक्चतुष्टयरूपे परमा
र्थ भूतं श्रीरामावभासकमत्तारेव हियस्मा
दित्यर्थे एत उक्त रीत्यानाम रूपात्मके शाब्द
स्वरूपे स्वहिक्रमेणएवं प्रदर्शिते ब्रह्म स्तु

सर्वंह्येतद्ब्रह्म ॥

हे श्रीरामाख्ये ब्रह्मणि आरोपिते वाचारंभ
णे विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यमिति
श्रुतेः ननु सर्वंह्येतद्ब्रह्मेत्यत्र सर्वंखल्विदं
ब्रह्मेत्यत्र च सर्वात्मके ब्रह्मो च्यते नकिं सर्वं
ब्रह्मेति सर्वं मनूद्य ब्रह्मात्मना विधिः अथवा
ब्रह्मा नूद्य सर्वात्मकता विधिः नप्रथमः भि
ध्यात्वेनाः भिमतस्य ब्रह्मात्मनायामः मिथ्या

45

त्वापत्ते र्नहि ब्रह्म मिथ्या नद्वितीयः ब्रह्म
णो मिथ्यात्वापत्तेः नहि मिथ्याभूतात्सर्वस्मा
दः भिन्न ममिथ्या भवितुमर्हतीति ॥

भाषा ऐसाही कार्य और कारण
रूप सब प्रपंच को वाच्य का अ
र्थ रूप को वाचकत्व का अर्थरू
पत्व ओंकार विषे दिखाया वाच्य
और वाचक को भेदसे परमार्थ
रूप श्रीराम की प्राप्ति नही होवे
गी इसवास्ते तिना दोनोंके अभे
का ऐक्य को दिखावनीहै श्रुति
सर्वहितनु इस करके सब जो का
र्य और कारण रूप वाच्य और वा
चक है सो ओंकार परा आदिक
चार वाणी रूप परमार्थ भूत श्री
राम को भासन का प्रकाश क
रणेवाला अक्षर भीहै हि का जि
स वास्ते इह कहीहुई रीती करके
नाम रूप स्वरूप प्राह हहि और

रा॰ना॰
टी॰
४८

अर्थ इहांके क्रम करके पिछेरि
छायासब ही ब्रह्म का शुद्ध श्री
रामनामक ब्रह्मविषे आरोप की
नाहै वाणी करके आरंभकरणा
घट आदिक विकारही नामहो
ना मिटी ऐसाही सत्य है इस श्रुती
करके फेर प्रश्नको उठावनाहै स
र्वहेतत् ब्रह्म इस विषे और स
र्वखल्विदं ब्रह्म इस विषे भी स
र्व स्वरूप ब्रह्म कहे जाताहै तट
का सर्व जो जगत है तिस को
ब्रह्म रूपताविधान करेजाताहै
अथवा ब्रह्मकोंही सर्वरूपताहो
तो इह दोपक्ष आते पके है ति
नोंविषे पहलापक्ष का जगत

मूल अथोच्यते सर्वमनूद्य तस्य ब्रह्मात्मता
विधीयते नतु ब्रह्मणः सर्वतायां सर्वस्याः मिथ्या
त्वापत्ति दोषाय सर्वस्यापि ब्रह्मात्मना सत्य
त्वस्येष्टत्वात नहिं प्रपंचो मिथ्येतिवाचोयुक्ति

46

रप्रक्तास्यादिति चेन्न स्वरूपतो मिथ्यात्वस्य ब्रह्म
रूपेण सत्यत्वेप्यप्रत्यूहत्वात् नहिस्वरूपेणमिथ्या
भूतमपि रजतं शुक्तिरूपेणापिमिथ्या भवति
ननुनहि सुवर्णं कुंडलं मिथ्यत्रापि केनचित् रू
पेण सत्यत्वं केन चित् रूपेण मिथ्या त्वपापने
दितिचे न्नवैषम्यात् नत्रहि सुवर्णकुंडलांशयो
रत्यन्तरस्या पिबाधाभावात् विनैवबा धंसामाना
धिकरण्यप्रयोगात् ॥

भाषा को अनुवाद करकें ब्रह्म मता
करण रूप पक्ष नही होता क्यों कि
मिथ्या भाव करकें मानित हुये जग
त को सत्य रूप बनने के प्रसंग हो
नेसे ब्रह्मन मिथ्या नहीहै ऐसाही
हमरा पक्ष भी क्या ब्रह्मको ही ज
गत रूपताका करण रूप नही हो
ता ब्रह्मको जगत रूपता करणे क
रकें असत्यता के प्रसंग आव नेसे
मिथ्या भूत सर्व जगत से अभिन्न हु
वा ब्रह्म सत्यहोने को योग्यनही है

ए॰ना॰
टी॰
४७

47

इस आक्षेप विषे उत्तर को कहता है
इहां सर्व जो जगत है तिस को स्था
पित करके ब्रह्म रूपता विधान क
री है इह भीन ही है जो सर्व को ब्र
ह्मरूपता विषे सत्यता का प्रसंग
होय वाले क्यौं कि सबही जगत
को भी ब्रह्मरूपता करके सत्यता को
अभिमत होनेसे हुन जो कहोगे
प्रपंच तु मिथ्या है इह वाणी की यु
कि अयुक्त हैं इहत नही है स्वरूप
करके मिथ्या त्व को ब्रह्मरूपता क
के सत्यत्व का विवाद रहित होनेसे
जैसा तु शुक्ति का रजत स्वरूप करके
मिथ्या हुवा ही शुक्तिरूप करके भी
मिथ्या होने को योग्य है इस उपर
फेर आक्षेप को उठावता है हम पू
छता तब सोना कुंडल इस विषे भी

किसी एक रूप करके सत्यता और
किसी एक रूप करके मिथ्यता का
प्रसंग होवे इह लजबक होगा इह
नहीं है क्यों कि सर्वं खलु और स्व
र्णं कुंडल इनों को विषमता होनेसे
उहो स्वर्ण अंश और कुंडल अंशरू
प दोनों विच एक अंश को भी बा॰
धके नहीं होनेसे बाधके बिना ही
सामाना धिकरण्य के प्रयोग हो॰
नेसे ॥
मूल सर्वं खल्विदं ब्रह्मेत्यत्र च सर्वस्य स्वरूपतो बाध्यतया
बाधे सामानाधिकरण्य प्रयोगानुपपत्तिः चौरः
स्थाणु रितिवत् एतदेव श्रीराम पूर्वतापनीये
जीवत्वेनेदमो शसेत्यत्र विशदीकृते नत्वात्मनो
व्यतिरेकेण केवलस्वरूप निरूपणेन परोक्षेण
कथ्यपरमार्थं भून रामावाप्तिः नहि सो रं ने नो द
हतीति कथया पाकनिष्पत्तिर्ह्यग्नाया वलम्बाणो
नस्फुरति प्रतीतरूचि ल्लिहिकान्यायेन परमार्थो प
३३ लिमाह प्रथमात्मेति पूर्वोक्त हेतोः श्रयोत्रदृष्ट
प्रथमात्माखल ॥

ग·ना· टी· ४८

र्थः यस्मा त्सर्वं ब्रह्म तस्मात् अप महम सीन्यत्तुम
वगोचर आत्मापि ब्रह्म न हि सर्वस्मा द्भिन्न त्वेनाति
क्ष्ण्यसुं जादि षीकाव स्यप्यक्रियते आत्मा तत्वा
ऽऽ त्मनः प्रत्यगात्म त्वेन सर्वस्य दृश्यत्वेनच सर्वं
स्यात्मार्थक्यो आत्मनः सर्वश्रुतिस्मृति पुराणेति
हासा दिष्ववगम्यत एव सत्य ॥

भाषा सर्वं खलु इदं ब्रह्म इस विषे स
र्वको स्वरूप करके बाध होनेसे जब
बाधहूवा तब सामानाधिकरण्यके
प्रयोग की अप्रयोग्यताहै और है इह
लकरी इसकेन्यारे इहही बात औरा
म हुवे तापनीय विषे जीवत्वेनेद
मोंशस्य इस श्रुतिके निर्णय विषे प्र
कट कीना फेर आक्षेपको उठावना
है हम पूछता आत्मासे भेद करके
केवल स्वरूप मात्र के निर्णय करणे
करके और परीक्षा करके कथन कर
णे करके कैसा परमार्थ भ्रमनाम की
प्राप्ति होवेगी इहतत नहीहोता कोई

48

कहेंगा सूर्यका तेज जलावताहै इस
कथ्यामात्र कर्के ही पाक की सिद्धि
देखी पावत्काल सूर्यकांतमणि पास
भासमान नही होवेगा इसीवास्ते गुड
जिह्विकान्याय कर्के जैसा बालक को
प्रथम जिह्वा उपर गुड को देते पिछे
कडवे औषध को खवावते तैसा ही
परमार्थ की सिद्धी कोकहताहै प्रथ
मात्मा इस कर्के पिछे कहे होत कर्के
जिस कारण सबही ब्रह्महै तिसी
वास्ते इह हमहो इस अनुभवका वि
षयजो आत्माहै सोभी ब्रह्महीहै इह
त नही होतातोमज से इषीका के मा
ई सब से आत्मा बव नही करे याहै
फेर पूछता है फेरपूछताहै आत्मा
को प्रत्यगात्मा होने कर्के सर्वकोट
पप होने कर्के सर्वसे भिन्नता आत्मा
को सब श्रुतिस्मृति इति हासादिको

वा॰ना॰
टी॰
४५

बिषे लभने आव नीहीहै उत्तर को
देतासम्पही है २६ ॥

मूल नकेन वानेत्युच्यते व्यवहार मवलंब्य तन्न
यमे आत्मनो ब्रह्मत्वं दर्शयितुं सर्वोनः पातित्व
शुक्रे स्वरूपेण सर्वव्यतिरिक्त आत्माविदानी नि
रूप्यते: नोदोषा नवकाशः भवत्वय मात्मा ब्रह्म
तथा पि ब्रह्म परोक्षत्वं कथमागत मितिचेत् उ
च्यते प्रथमस्मी मनुभव गोचर आत्मा तद्रके म
ट पादैः श्रमःप्रमत्तगते समीपवर्तिचैतदो रू
पम् अदसस्तु विप्रकृष्टे तदिति परोक्षेवि जानी
यादिति यदि परोक्षःस्यादात्मा तदातस्य जडत्वे
न प्रकाशनात्तु पपत्तौ जगदांध्य प्रसङ्गेन संथ
सेवोपलग्रस्य विनिपातःपदे पदे इतिन्यायात्
तत आत्मनो ब्रह्मत्वे ब्रह्मणोपि पारोक्ष्य विहया
परा त्वावाभिरत एवेत्याभिप्रायः यद्यपि हहत्वा
हेहरणनाद्वलेति ब्रह्मपदार्थज्ञान मल्पः यमस्मी
त्यात्मज्ञानमप्य क्लिनण्याप्यात्मैव ब्रह्मेतिज्ञापय
ति शास्त्रेनदेव ब्रह्मात्मै को पदार्थ श्रीरामावाशि
ष्ठिक्केभवति ॥

49

भाषा फेर कोन नही कहताहै व्यव
हार को आश्रित करके सो प्रथम आ
त्मा को ब्रह्मत्व दिखावने वाले सब

के विच आगम कहा अब स्वरूप क
कैं सबसे भिन्न आत्मा निरूपण करी
दाहै इसीकरकैं तुमने कहे हुये दोष
का अब काशनहीहै शंका होवे इह
ही आत्मा ब्रह्म तोभी ब्रह्म की परोक्ष
ता किस प्रकार आई है ऐसा जब
तुम कहोगे उसउपर हमकहते इह
हमको इस अनुभव काविषय आ
त्माहै इस उपर भट्टपादोनें कहा ह
हमशब्दका अर्थ प्रत्यक्षगत है पत
द् शब्दका रूप प्राप्त होने वाले विषे
गया है अहम शब्दकारूप हरके वि
षय जानना तत् शब्दका रूप परो
क्षविषेजानना ऐसा जब आत्मा परो
क्ष होताथा तब तिस को जड़ता क
रकैं प्रकाशता की अयोग्यता करकै ज
गत की ज्ञेयताका प्रसंग होवैगा
ज्ञेयके साथलगे हुये ज्ञेयको पद

रा॰ ता॰
टी॰
५॰

परके प्रति निरपेक्षता होता इसन्याय
करके इसीवास्ते आत्माको ब्रह्मरहोन
मैंने ब्रह्म को परोक्षता की निवृत्ति क
रके अपरोक्षकीप्राप्तिहोती यह अभिप्रा
य जानना जबतत्त्वहत होने और व्याप
क होने करके ब्रह्मपद के अर्थ कारता
न है अर्थ प्राप्ति यह हमहो ऐसाआत्म
ज्ञान है तो भी आत्मा ही ब्रह्महै ऐसे
ज्ञान को प्राप्तकरताहै सोही ब्रह्म औ
र आत्मका ऐक्य श्रीराम परमार्थ की
प्राप्तिहै ऐसा इसने करके कहा होताहै

मूल अयमात्मा ब्रह्मेत्यनेन तम ह्यवाक्येनोक्त मर्थं
दृढयितं अध्यारोपाः पवादाभ्यां निष्प्रपंचं प्रपंच्य
तः इति न्यायेन त्वंपदार्थो तत्पदार्थ योरुः पासको
ः पास्ययो रारोपाःप वादद्वाराः त्वंद्वै करस शुद्ध ब्र
ह्मः वाप्तिमाह सोऽयमात्मा चतुष्पादिति सर्ववीक्षः
अयमात्मा परावरत्वेनव्य वस्थितस्तुष्पात् चत
स्रणः कार्षापणवत् नगौरिव वतस्रणः
सोऽयमा त्मा चतुष्पात् ॥

50

यथाहि कार्षापणस्तु विज्ञेयः कार्षिकस्ताम्रि
कः पण इति मनुवाक्यात्कर्षेण पलचतुर्थांशेनो
न्मितः ताम्रविकारो माषषोडशात्मकः सव एवं
एवं पादाना मन्तरो न मेलने नैव कार्षापण
संख्यां संज्ञां लभते नान्यथा तथात्रयाणां विश्वा
दीनां एवं एवं प्रविलापनेन तुरीयस्य प्रतिपत्तिं
गमयितुं करण साधनः पाद शब्दः ॥

भाषा इहही आत्मा ब्रह्म है इस महा
वाक्य करके कहे हुये अर्थ को इ ढक
रणे वास्ते अध्यारोप और अपवाद क
के प्रपंचसें रहितजो ब्रह्म है तिसको
प्रपंचकरने अर्थात अविचार्य ब्रह्म
को विचार विषय करने है इसन्याय
करके तत्पदार्थ और त्वम्पदार्थको क्रम
करके उपासक और उपास्य को आरो
प और अपवाद के द्वार करके अखंड
एकरसशुद्ध ब्रह्म की प्राप्तिको कह
नाहै सो यथात्माइस करके सो पिछे
कहाहुवा इहो आत्मा पर और अवर

ग॰ता
टी॰
५१

ना करकै अवस्थित हूवा वतष्मान का
वारवरणोवाला कार्षापण के न्याई
नंहीं नगाऊ जेसा चार पादो वाला है
सोही दिखावनेहो कार्षापण सोही
जानना जो तोबेका कर्षपरिमित प
ण होता इस मनुष्ट्रजा पन के वाक्य
करकै कर्ष जो पल काचोथा हैसा
तिस करकै मिता हूवा तोबेका विका
र सो लामासे रूप सोजेसा पिछलेपि
छलेपादो कों अगले अगलेके साथ
मिलावने करकै ही कार्षापण नाम
क संख्याकी संज्ञा कोल भनाहै अव
र प्रकार करकै नेंतहील भना तैसा
ही तीन विश्व आदिक पादोंकों तुरी
यके साथ मिलापरूपप्रतिपत्तिको
संपादवने वास्ते करणसाधन पान
शाह्नानना अर्थात जिस करकै गम
न का संकारूपमिला पदहोता ॥

51

मूल कथं च तच्छान मित्यत आह जागरितस्थान
इत्यादिना चतुर्थमन्त्येन इत्येतेन जागरिते स्थान
मस्येति जागरितस्थानः बहिःप्रज्ञः स्वात्म व्यति
रिक्ते विषये प्रज्ञायस्य स बहिःप्रज्ञः बहिर्वि
षयेच यस्य प्रज्ञाः विद्या कृताव भासन मित्यः
र्थः सप्तांगाः सप्त मस्तका दीनि अंगानि अस्य
स तथ्या नाथ्येवो क्तानि वार्तिक कृद्भिः शिरश्च
क्षुर्मुखेप्राणो मध्ये वस्ति स्तनो पथ्यः इत्येग स

जागरितस्थानो बहिःप्रज्ञः सप्तांगए
कोनविंशतिमुखः ॥

सर्केवैश्वानरोपास्तिश्रुतौश्रुतमिति तानिकानी
त्युच्यते द्यौर्मूर्धा चक्षुरादित्यः अग्निर्मुखं प्राणो
वायुर्देहमध्ये आकाशः वस्तिः समुद्रः पृथिवी
पादाविति सप्तमूलो केषु शिरआदीन्यंगानि
यस्यैव एकोनविंशतिमुखः पंचज्ञानेंद्रियाणि
पंचकर्मेन्द्रियाणि पंचप्राणाः चत्वार्यंतः करः
णान्येवमेकोनविंशति साधिदैवतानिनाम
रूपात्मय क्रियासाराणि मुखान्युपलब्धि स्था
नान्यस्यैकोनविंशतिमुखः ॥

भाषा किसप्रकार चतुष्पाद्‌ता है
इसी वास्ते कहता है जागरितस्थान
इस से लेके चतुर्थमन्त्रंत इस ग्रंत

मां॰गा
टी॰
५२

वाले वाक्य करके जागरित का जा
ग्रत अवस्थाही स्थान जिस को सो
जागरितस्थान होता बहिः प्रज्ञ का
कहिये अपने से भिन्न जो विषय है
ति सबिषे प्रज्ञा का ज्ञान जि स को
सो हुवा बहिःप्रज्ञ और बाहिरले वि
षय बिषे जिस को प्रज्ञा का अवि
द्याने कीना प्रकाशान जिस को इ
ह अर्थ भी हो ताहै सप्तांग का हु
वा सात ७ मस्तक आदिक अंग हैं
जिसकों सोही सात ७ अंग वार्ति
ककारोने कहे इहहै सिर और च
क्षु और मुख और प्राण और उदर
कामध्य और वस्ति का मूत्राशय
और तिससे हेठला भाग इह सात
७ अंग वैश्वानरकी उपासना की
श्रुति बिषे सुनेहैं सो कौनहै इस
अर्थकोकहतेहै सिरकास्थान द्यौ
लोक और चक्षुकास्थान सूर्यमुख

कास्थान अग्नि प्राण कास्थान वायु
देहकेमध्य उदर कास्थान आकाश
वस्ति जो मूत्राशयहै तिस कास्थान
समुद्र और पादोंका स्थान पृथिवी
ऐसा जिस कौंसात ७ लोक सात अं
गहैं एकोनविंशति का उन्नीस १९
हैंमुख जिसको पांच ५ ज्ञानेंद्रिय
और पांच ५ कर्मेंद्रिय और पांचप्राण
और चार ४ अंतःकरण यहो उन्नीस
अपि देवां समेत और नाम रूप के आ
श्रय क्रियाप्रधान मुख का लभने
के स्थानहै जिसको सो ॥

मल श्रीनृसिंहपूर्वतापनीये प्रणवमेवं गंजानी
यादितिश्रुत्या मंत्र राजोगत मोंकारस्याऽभि हितं
तथैव श्रीमच्छंकराचार्यैराख्याते तथा नृसिंह
पूर्वतापनीये देवा ह वै प्रजापति मब्रुवन्नणो र
णीयांस मिममात्मानमोंकारंनो व्याचक्ष्वेत्यनया
श्रुत्याप्राधान्य मोंकारस्याऽभिहितं मांडूक्योपनि
षदि प्रणव विषयोऽस्वाधीनत्वात् स्वाधीनत्वेन

आथाब्याः आथाब्य मोंकारस्योक्तं तथा श्रीराम ए
वं तापनीये जीवत्वेनेदमों शाश्वत्तनया श्रुत्या श्री
तारक षडक्षर मंत्रराजस्य सर्वांगत्वेनोन्नरांगत्वे
नच ओंकारोपासने निरूपिते अत्र श्रीरामोत्तर
तापनीयेः आथाब्ये आथाब्ये वाननत्योच्यते किं
मों कार एव षडक्षरं तारकं ब्रह्मो च्यते श्रुतोव्या
ख्याभेदेन पाठभेदेन न्यूनातिरिक्तत्वेच छांदोग्या
दावोंकारोपासना भेदेवान्यथा इति पत्नि नेमे
नव्या ॥

भाषा श्रीमान् नृसिंह पूर्व तापनीय
विषे प्रणवमेंगं जानीयात् प्रणव
को अंग को जानिये इस श्रुति करके
मंत्रराज की अंगता ओंकारकों क
हीहै और नरसिंह पूर्वतापनीय वि
षेंही देवाहवै प्रजापतिमःब्रुवन्न
णोरणी यांस मिःममात्मानमोंकारं
नोव्याचक्ष्व देवता सबही प्रकट करके
प्रजापतिकों कहते रहे सूक्ष्मसें सू
क्ष्मको इस आत्माको ओंकार को अंग
कनाई कहो इस श्रुति करके (ओंकार

को अस्तोके नाई कहो इस श्रुति करकें
ओंकार की प्रधानता कही और मो
डु का उपनिषत् विषं प्रणव विद्या
मैं स्वाधीनता और अस्वाधीनता क
कें प्रधानता और अप्रधानता ओंकार
की कहीहै और श्रीराम पूर्वतापनी
य विषं जीवब्रह्मनंदमें शास्त्र इस श्रुति
करकें श्रीतारकषडक्षर मंत्रराज को
पूर्व की अंगता करकें और उत्तर की
अंगता करकें भी ओंकार की उपास
ना निरूपण कीती है इस श्रीरामोत्त
र तापनीय विषं प्रधानता अथवा
अप्रधानता तेसी नहीकहीरी है किं
न ओंकारही छे ६ अक्षरो वाला ब्रह्म
कहाजाताहै इसीवास्ते आख्या के
भेद करकें जो पाठ का भेदहै तिस क
कें किसी स्थान विषं न्यूनता और
किसी स्थान विषं अधिकता भी हो

मा॰ता॰
टी॰
५४

जैसे इसीवास्ते छांदोग्य आदिक बिषे ओंकार की उपासना भेद बिषे अन्यथा प्रति पति का विरुद्धता नही मानवी ॥

मूल तथा स्थूल भुक स्थूलान्विषयान्शाथा त्येन सास्वादक रोतीति स्थूल भुक वैश्वानरः विश्वेषां नराणां नयनाद्वै श्वानरः स्थानादि पंचविशेषण विशेष्यो विराडाकारा थे इति यावत समोग वैश्वानर पद प्रतेपस्तसमष्टि व्यष्ट्यारः स्तनो रेकत्वप्र दर्शनार्थोः व्यष्ट्यांशगः विश्वश्चेति व क्ष्य मरो तैजसा दीना मुक्तत्वात् ॥ ननु हिनी

स्थूलभुक्वै श्वानरः प्रथमः पादः ॥

य तृतीय पादयोः हिरण्यगर्भो ः व्याकृतयोः प्रत्ु क त्वात समष्टि व्यष्ट्योरैक्य भेग प्रसंग इतिचे न्न यथा प्रथमे पादे वै श्वानरः विश्वैक्यप्रदर्शनार्थ लध्यैवाग्रिम पादद्वये तैः जस प्राज्ञो हिरण्य गर्भो व्याकृतै क्य प्रदर्शन परा विन्यवसेये प्रथमः पा दः पनस्त्वेकोनरपादाधिग मात्प्रथमः ॥

भाषा तथा तैसा ही स्थूलभुक का क हिये स्थूल जो विषय हैं तिनो को प्र धाननाकर्के अपने अधीन करेगा

सोइवा स्थूलभुक् वैश्वानर का स
बही मनुष्यों कों अपने संमुख ले
णे करके वैश्वानर स्थान आदि कणे
व ५ विशेषणों करके युक्त विशेष
विराट् रूप प्रकारका अर्थ जोहै इ
ह तात्पर्य जानना समांग पद और
वैश्वानर पद का इसविषे पावना
तोहै सो समष्टि और व्यष्टि रूप जो दो
आत्माहै इनोंकों एकताके दिखाव
ने वास्तेहै अमध्यान प्रसंग और वि
श्व ऐसा कहनाथा क्योंकि तैजस आ
दिकों को आगेकहे होनेसे फेर आते
पको उठाव ताहै इस पुछनाहो ह
सरे और तीसरे पाद को हिरण्य ग
र्भ और अव्याकृत को नहीं कहे हो
नेसें समष्टि और व्यष्टि को दोनोकों
ही एकताके मंगाहोनेंका प्रसंग आ
या ऐसाजो कहोगे इहनही होता

मां.का.
टी.
५५

क्यों कि जैसा प्रथम पाद विषे वैश्वान
रशब्द विश्वके ऐश्वर्य के दिखावने वाले
है तैसाही आगे कहे जावने वाले दो
पादों विषे तैजस और प्राज्ञभीहिरण्य
गर्भ और अव्याकृत की एकताके दि
खावने विषे तात्पर्य वाले हैं ऐसा
जानना चाहि प्रथमः पादः क्योंहोता
इसके प्रथम जानने से अगले दोपा
दोंके ज्ञान होने करके प्रथमता इस
को है ॥

मूल द्वितीयमाह स्वप्नस्थानः स्वप्नः स्थानमस्येति
स्वप्नस्थानः अन्तः प्रज्ञः जाग्रत्प्रज्ञाः नेकसाधना ब
हिर्विषये वावभासमाना मनःस्पन्दनामात्रा सती
तथाभूतं संस्कारं मनस्याधत्ते तन्मन स्तथा संस्कृ
तं चित्रितपट इव बाह्यसाधना नपेक्षमविद्या क
र्मभ्यो प्रेर्यमाणं जाग्रद्वद्भवति तथाच बृहदारण्य
के अस्य लोकस्य सर्वावतो मात्रामपादाय स्वा

स्वप्नस्थानोऽन्तःप्रज्ञः सप्ताङ्ग एकोनविं
शतिमुखः प्रविविक्तभुक् ॥

पित्वा स्वयं निर्माय स्वेन भासा स्वेन ज्योतिषा
प्रस्वपित्यत्रायं पुरुषः स्वयं ज्योतिरिति (?)

यांतः स्वप्नस्वा स्नमसः तद्वासना रूपांतर्लेबुप्रज्ञो
नःसप्तांग एकोन विंशति मुखः स्वप्नगमुखवेयो
तकस्यायेन वासनास्त्रविविक्तभुक्प्रकर्षेण
विविक्तनितःकेवल वासना मयान्भोगान्भुन
क्तीति प्रविविक्तभुक ॥

भाषा दूसरे पाद को कहताहै स्वप्न
स्थान क्याकहिये स्वप्न है स्थान जिस
को अंतःप्रज्ञक्या होता जाग्रत की
प्रज्ञा जोहै सो अनेक क्या बहुत सा
धनो वालीहै बाहिर बिषयो बिषे अ
वभा समान होके मन बिषे लगने
वाली हुई तैसे हुये संस्कार को मन
बिषे देतीहै सोमन तिसी जाग्रत प्रज्ञा
ने संस्कार वालाकीना चित्रपट जेसा
बाहिरले साधनो को नही अपेक्षा क
रणे वाला अविद्या और कर्मने प्रेरणा
कीना जाग्रत के न्याई होताहै तैसाही
बृहदारण्य बिषे अस्यलोकस्य इसश्रु
ति करके कहाहै इसलो ककी मात्रा

क्या वासनाकोले कर्के कैसाहै इह
लौं सब पदार्थ जान को अपने अप
ने इंद्रय कर्के लेणेमें रक्षा करणे वा
लाहै और अथर्वण विषे मनसे की
भवंति मनविषे कटेहोतेहैं ऐसे प्र
स्ताव को चलाय कर्के एकही देव
स्सम विषे अपने महिमा कों अनुभ
व करताहै एकोदेव इमस्तुति कर्के
भी इंद्रियों की अपेक्षा कर्के मन कों
अंदर सूक्ष्म होनेसे तिनोंकी वासना
रूप अंदरवल लभा हूवा है ज्ञान ति
स ने इसीवास्ते समोग और एकोन
विंशतिमुखवालाहै इसी प्रकार भो
गों और मुखोंको कहीहुई युक्ति क
कै अंदरवल वासना रूपरहावने
कर्के प्रविविक्तभुक कथा प्रकर्ष क
कै विविक्त कथा अंदर वलकेवल वा
सना मय भोगोंको भोग नानंद ही

प्रविविक्तभुक है ॥

मूल तैजसः सज्ञा ग्रन्थप्तुमीत्वतैजसा गछती ति तैजसउकाराद्धः द्वितीयःपादः २ विषपि स्थानेप्तुव्यापकता त्वति बोधलक्षणस्य स्था पस्य तत्त्ववादतः पूर्वाभ्यां सुप्ते विभजते तृतीयपाद कथनार्थे यत्रेति यत्रयस्याः म व स्थायां सुप्तःनिद्रितः पुमान् कंचन किमपि कामं विषयेन कामयते आसक्त बुध्या न स्व

तैजसो द्वितीयःपादः यत्रसुप्तो नकंच न कामंकामयते नकं चन स्वप्नं पश्य ति तत्स्थ प्तुप्तं सुप्तस्थान एकीभूतः ॥

भिलषति नकंचन स्वप्नं पश्यति किमपि वा सनाम ये भोगं नानुभं यते तत्स्थ प्तुप्तं सासुप्त मावस्था तृतीयं पादमाह सुप्तस्थान इत्या दिना सुप्तस्थान उक्तंसुप्तं स्थान मस्येति तथा प्रसक्तार्थवादस्या प्रकृताद्वियमानमः पः त्र समोगातं एकोनविंशति मुखवेव सन्मात्रत्व पृथक्‌ विभाव्यत इत्याह एकीभू त इति ॥

भाषा सोही प्रविविक्तभुक् तैज स नामकहै सो जाग्रत और स्वप्न

मा॰ का॰
टी॰
५७

सीको अपने तेज करके जानताहै इ
सी वास्ते ते जस प्रणवके अंगड
ये उकारका अर्थ हमगायाहै ती
न ही स्थानों विषे व्याप्त होनेसें प
तिबोध लक्षण जो स्थाप्य का स्थि
ति को करणे वाला उस को तुल्य
का समान होनेसे इसीवास्ते पिछ
ले हुयेसे अर्थात् जाग्रत और स्वप्न
से सुषुप्त विभाग करता अर्थात्
बख करके कहताहै तीसरेपाद
के कहनेवाले यत्र इत्यादिकवाक्य
करके यत्र का जिस अवस्थाविषे
सुप्त का निद्रावालाहुवापुरुष कि
सीएकविषय को नही कामना
करे अर्थात् भ्रामक बुद्धी करके न
ही अभिलाष करे और किसी स्वप्न
को नही देखेगा अर्थात् वासना

57

मय भोग को नही अनुसंधान क
रे सो सुषुप्ति का सो सुषुप्ति अव
स्था होती है जिसको तीसरे पाद
को कहतीहै सुषुप्त स्थान इत्यादि
करिके कर्के सुषुप्त है स्थान जिस
को और असत्कार्य वादको अयुक्त
होने से इस विषे जब विद्यमान
भी समोगत्व और एकोनविंशति
मुखत्व सो सत्मात्र से बध नही ल
भने योग्यता इस वास्ते कहता है प
की मूलःका समरस हुवा ॥

मूल किमात्म कोसावेकीभाव इत्या कोत्तायो
सन्मात्ररूपः प्रज्ञानात्मक इत्याह प्रज्ञानघन इ
ति जाग्रत्स्वप्न प्रज्ञाने न घनत्वा द्विवि इवास्ते
ति जाग्रत्स्वप्न प्रज्ञानेन घनत्वा द्विवि इवास्त
वे रसानो सैंधव खिल्य इव प्रज्ञानघनः एव
कारेण नात्यंतर प्रतिषेधः अत एवैकत्वेन वि
शेष विज्ञानाभावात् आनंदमयः आनंद प्रा
यः दुःखबीजस्याविद्यमानत्वादाऽऽनन्दमेवे
वेति न वक्ते युक्ते अनेन सच्चिदानंद भासको
न सत्त्वे सन्मात्ररूप ब्रह्म ज्ञानात्मक सामान्य

प्रज्ञानघन एवा ॥ नन्द मयोह्यानंदभुक्

रा॰ता॰ टी॰ ५८

शरीर एवे श्रोपाधः प्रदर्शितः विश्वतैजसयोरि वास्यापि भोगमाह आनंदभुगिति आनं दं भु नक्तीति तथा यथाहिलोके निरीहः स्थितः सु खानंदभुगुच्यते तथा ऽस्याभाविक परमानन्द भोगउपपन्नः प्रज्ञानघन इयोयं सौषुप्तआत्मे ति ॥

भाषा किस स्वरूप वाला कैसा है इह ए की भाव इस आकोत्ताविषे सन्मात्ररूप प्रज्ञात्मक है एकीभाव ऐसाकहताहै प्रज्ञानघन इस करके जाग्रत और स्वप्नके प्रज्ञान से घन का भरितहोने से सबरसो को ऐसे दालोणकी डलीजे सा प्रज्ञान क के घन ही है एव इस एवकार क के अवर जातीकानिषेध है इसीवा ले एकता करके विशघज्ञानके अ भाव होने से आनंदमय का प्रा यः करके आनंदएकजे सा प्रजाभी डख केबीज को विद्यमान होनेसे

58

सर्वथा आनंदही है ऐसा नहीकहने
केयोग्य है इस कर्के सतचित आनंद
रूप जो भासक अनसुख सन्मात्र रूप
ब्रह्म ज्ञानस्वरूप सामान्य शरीरविषे
प्रवेश करणे का उपाय दिखाया
विश्व और तैजस के न्याई इसके भोग्य
को कहताहै आनंद भुगइस कर्के आ
नंदको ही भोगलेवेगा जो तैसाहै जै
साने लोक विषे चेष्टासे रहित बैठा
हूवा सुख और आनंद को भोग करणे
वाला ऐसाकहदाहै तैसाही इहां भी
स्वाभाविक परमानंद का भोग योग्यहो
ताहै ॥

मूल कथमेव गम्यत इतिचेत् स्वप्नजाग्रत्स्मृता का
रणात् इत्याह चेतोमुखइति स्वप्नादिप्रतिबोधेचे
तः इति द्वारीभूतत्वात् तथाबोध लक्षणंवाचेतो
नः इति द्वारीभूतत्वात् तथाबोध लक्षणंवाचेतो
मुखं द्वारमस्य स्वप्नाद्यागमने प्रतीतिचेतोमुखः
भूत भविष्यत् ज्ञानत्वात्सर्वं विषय ज्ञानत्व मस्ये
वेत्याह प्राज्ञ इति सम्मोहि भूतस्सर्वंगत्या प्राज्ञ उ

रा॰ ना॰ टी॰ ५५

59

ध्याने अथवा प्रज्ञानघनमित्येतीनमात्रमस्येवा साधारणे
रूपमितिप्राज्ञः इतरयोर्विशिष्टमेव ज्ञानमस्ति

चेतोमुखः प्राज्ञस्तृतीयः पादः एष सर्वेश्वरः

सोयंप्राज्ञो मकारार्थः तृतीयः पादः चतुर्थं पाद
माह एष सर्वेश्वर इत्यादिना एष सर्वेश्वरः एष
आत्मा स्वरूपावस्थः अय मेव हि सर्वे श्वरः यद्यपि
प्राज्ञ स्यापि सर्वे श्वरत्वादि धर्म जाते युज्यते तथा
पि सापेक्षत्वेन सबीजत्वेन च निरस्यते तुरीयस्य
तु निरपेक्षत्वात् निर्बीजत्वात् सर्वे श्वरत्वादि धर्म
जाते संगच्छत इतिभावः ॥

भाषा प्रज्ञानघन रूप है इहसौम्य आ
नंद है इह किस प्रकार जानने आवता
ऐसा जब कहोगे स्वप्न और जाग्रत की
प्रज्ञाके कारण से इस प्रकार कहता
है चेतोमुख इस कर्के स्वप्न आदिक
के प्रतिबोध विषयविज्ञ केप्रति द्वार
होनेसें और तैसाबोध लक्षण जिनही
है मुख का द्वार इस को स्वप्नआदि
कके आवने प्रति सोइइवाचेता मुख

भूत और भविष्यत के ज्ञान होनेसे
सबके विषय ज्ञानत्व इसी को ही है
इस अर्थको कहताहै प्राज्ञ इस करके
जिस वास्ते सुषुप्ति विषेगाया पिछली
गति के अनुसार प्राज्ञ का जउजेसा
केहदा अथवा प्रज्ञा क्यात्तसि ज्ञान
मात्र इसीका असाधारण रूपहै इस
वास्ते प्राज्ञ कहाजाताहै अवर उसी
को विशेष रूपही ज्ञानहै सोही इह
प्राज्ञ मकार का अर्थ तीसरा पादहै
अब चोथेपादकोकहताहै एषसर्वे
श्वर इस करके इह आत्मा अपने स्वरू
प विषे स्थित हूवा इहही सर्वेश्व
रहै जदभी प्राज्ञ कोभी सर्वे श्वरत्व
आदिकधर्म जान योग्य होता तोभी
सापेक्ष और सबीजत्व करके हरकर
देनेहैं तुरीयकोतो निरपेक्ष और नि
बीज होनेसे सर्वे श्वरत्व आदिक य

मां॰ता॰
टी॰
९

मैज्ञात योगपही होताहै इह इस बि
षेतात्पर्य है ॥

मूल सर्वेश्वरत्वे हेतुमाह एष सर्वज्ञ इति स्वयमेव
हि सर्वावस्थाभेदज्ञाता सर्वेश्वरत्वेप्यंतरेशत्वेनस्या
दित्याह एषोंतर्यामीति स्वयमंतरनुप्रविश्य सर्वे
षां भूतानां नियंता बाह्याभ्यंतरनियंतृत्वे हेतुमा
ह एषयोनिःसर्वस्येति योयस्य कारणंसतस्यनि
यंताभवति सर्वयोनित्वे हेतुमाह प्रभवाप्ययौहि
भूतानामिति हियस्माद्भूतानामेव प्रभवाप्ययौ
उत्पत्ति प्रलयौ कृत वांस्तस्मात्सर्वयोनिः स्वयम

60

एषसर्वेज्ञ एषोंतर्याम्येषयोनिः सर्वस्य प्र
भवाप्ययौहिभूतानांनबहिः प्रज्ञंनांतःप्र
ज्ञं ॥

द्वितीयपादे स्थाना दीति पंच पंच विशेषणानि
निरूपितानि तृतीये षट् चतुर्थेन पंच विशेष
णै रीश्वरत्वं प्रदर्शितं तदीश्वरत्वादिकं मायामा
त्रंविहाय शुद्धस्वरूपमात्मनः पंचदशविशेष
णैर्विशेषितंशिवमित्याह नबहिः प्रज्ञमिति ब
हिः विषय व्यापारोपर माहिस्वप्नसाक्षिणी जाग्र
दवस्था प्रतिषिध्यते नहि मनोव्यापारस्यदुर्वा
रत्वात् अंतःप्रज्ञत्वे प्रसक्ते तन्माभूदित्याह नां
तः प्रज्ञमिति ॥

भाषा सर्वेश्वरत्व विषे हेतुको कह

ताहै एष सर्वज्ञ इस करके १हही सव
अवस्था भेदोंको जानने वालाहै स
र्वेश्वरवहोके भी अद्दरलेकाई शाव
नही होवे इस वास्ते कहताहै एषो
न्तर्यामी इस प्रकार १हही अन्दरव
ल प्रवेश करके सबही भूतोंका नि
यंता अर्था प्रेरकहै बाहिरवल और
अन्दर वल नियंतृता विषे हेतु को
कहता है एषयोनिःसर्वस्य इस क
रके जो जिसका कारण है सोतिस
का नियंता होताहै सर्वयोनिता वि
षे हेतु को कहताहै प्रभवाप्ययौ इ
स करके जिस कारण भूतों को उत्प
त्ति और प्रलय को करताहै तिसी
वास्ते सबका योनि काकारण है
प्रथम और द्वितीय पाद विषे स्थान
आदिक पांचपांच ५ विशेषणनि रू
पण कीते है और तीसरे विषे छे ६

वा॰ ना॰
टी॰
८१

और चौथेपाद विषे पांच ५ विशेषणों
करके ईश्वरता दिखाई सो ईश्वरतादि
क मायामात्रही है तिसको छोड क
कैं शुद्ध स्वरूप आत्माका पंदरा १५
वि शेषणों करके विशिष्टकीता शि
वही है इस श्रुति को कहना नबहि
इस करके नबहि प्रज्ञ का बाहिरले
विषय व्यापारोसे हटने से जाग्रत
अवस्था निषेध करीदई है नट मन
के व्यापार को नहीं हद् तेसे श्रेनः
प्रज्ञताहोवेगी इसवास्ते कहते है
नान्तः इसगकें ॥

मूल अनेन नै जस साक्षिणी स्वभाः वस्थानि षि
धने उभय व्यापार प्रतिषेधेन नदेनराल व्यापा
रे शामे तज्ञिषेपति नोभयतः प्रज्ञमिति जाग्रत्स्व
प्नंतराले मनो व्याप्रते प्रज्ञायें नकुर्यादि त्यर्थः
अनेराल प्रतिषेधेनोभयत्र युग पत्र ज्ञार्थ व्या
पारे शामे तज्ञिषे धतिन प्रज्ञमिति एवं सर्वतो
नोभयतःप्रज्ञं नप्रज्ञं नाप्रज्ञंनप्रज्ञानघनं ॥

61

मनोव्यापार प्रतिषेधाद्यो हितं मनोः विद्यात्म
कं समवतिष्ठ नत्स्थितिं प्रतिषेधति नाऽप्रवृत्तमि
ति नत्प्रतिषेधाऽदृत्तान साक्षिके स्वप्ने प्रामे
तन्निषेधति नप्रज्ञानघनमिति एभिः षड्भिः प
दैःप्रति षेधभूतैः उपास्य प्रतिकूलं प्रतिषिध्य
यस्मिन्नु पास्ये मनो व्याप्तं तदुपास्यं निर्दिशति
नवभिःपदैः अदृष्टमित्यादिभिः ॥

भाषा इस करकै तैजस साक्षीवाली
स्वप्नाऽवस्था निषिद्ध करीदी है दोनो
विषे व्यापारके निषेध करणे करकै
तिनोका विचला व्यापार प्राप्त हुवा
तिस को निषेधकरता है नोभयतः
इस करकै जाग्रत और स्वप्नके अंतरा
ल विषेव्यापारवाला कीता हुवास
नज्ञान के अर्थको नही करैगा इ
हइस कातात्पर्य हुवा अंतराल जो
मध्यहै तिसके निषेध करणे करकै
दोनोही अवस्थाहों विषे येकठेही
घना का ज्ञान प्राप्त हुवातिस

कोभी निषेध करताहै नप्रज्ञं इस
करकें इसी प्रकार सबसे मन के
व्यापारोंके निषेधकरणेसे पराप्त
कीना अविद्यात्म कही रहैगा उ
सकी ऐसी स्थितिको भी निषेधक
रताहै नअप्रज्ञं इस करकें उस विषे
भी निषेध करणे से अज्ञानहीसा
ही स्वप्न अर्थात गाढ निद्राप्राप्तहु
ई उस को भी निषेधकरताहै नप्र
ज्ञान घनं इस करकें इना प्रतिषेधरू
प छे ८ पदो करकें उपास्य आत्माके
प्रतिकूल का विरोधियोंको निषेध
करकें तिस उपास्य विषे मन अवस्था
मैहै तिस को नव ९ पदों करकें दि
खावता है अदृष्टमित्यादिकों करकें

मूल दृष्टं॰ विषयत्वाद्दर्शना॰ योग्यं यस्येन्द्रिय
स्य योविषयस्तेनैवसच्चायत्ने नान्येनेः तिनिय
मात अव्यवहार्यः व्यवहार्ये अव्यवहार्यः ग्राह्ये अग्र

एवाऽग्राह्यं अतएव अलक्षणं नलक्षणं लिंगं
विद्यते यस्य तद् लक्षणं अतएवाऽचिंत्यं अनु
मानेन तर्केण वा अतएवाऽव्यपदेश्यं नियता
कारोपास्यप्रतिपादकैः शब्दैः अत एव एका
त्मप्रत्ययसारं एकस्मिन् सर्वेषामात्मनो प्रत्य

अदृष्टमऽव्यवहार्यमऽग्राह्यमऽलक्षणमऽ
लिंगमचिंत्यमऽव्यपदेश्यमेऽकात्मप्रत्य
यसारं प्रपंचोपशमं ॥

यः एकात्म प्रत्ययः स एव सारं यस्य तत्तथोक्तं य
द्वा एकएवात्माऽया सो यामकयोरित्येव प्रत्य
यः शेषं पूर्ववत् अतएव प्रपंचो पशमं प्राग्र
कृत्यायेन मनसो हि बाह्य दर्शन स्मरणं व्यापा
राऽभावा द्वाहनत्वाच्च स्वप्नः भावाद्यो पास्य
अतिरेकेण प्रपंचाप्रतीतेः प्रपंचोपशममिति

भाषा दृष्टिके नहीं विषय होनेसे
दर्शन के अयोग्यहै और जिस इंद्रि
यका जो विषय है तिसी करके सो जा
नने आवनाहै अवर करके न नहीं
जानने आवनाहै इस नियम से इसी
वास्ते सो अव्यवहार्य का व्यवहार
में नहीं आवने वालाहै इसीवास्ते

रा॰ना॰
टी॰
६३

63

अध्यात्म का ग्रहणाकरणेके अयो
ग्यहै इसीवास्ते अलक्षण है नहीं है
लक्षण का उपलक्षण भूत चिह्न
जिस को इसी वास्ते अचिंत्य का अ
नुमान करके अध्यवसान करके चिं
तन करणे का नहीं विषय है इसी
वास्ते अव्यपदेश्य का नियत आका
र वाला जो उपास्य है जिसको प्रति
पादन करणे वाले शास्त्रो करके निर्दे
श करणेके अयोग्य है इसी वास्ते ए
कात्म प्रत्यय सार का एकस बिष
सब आत्मोका प्रत्यय का ज्ञान सो
हीहै सार जिस को अथवा एकही
आत्माहै उपास्य और उपासक को ऐ
सा जो ज्ञान सो है सार जिस को इ
सीवास्ते प्रपंचोपशम का पिछेक
है हुये त्याग करके मन को बाहिर
ले दर्शन और स्मरणके व्यापार के

नही होनेसे सर्वविरहित होनेसे अपने और पर के नहीहोनेसे उपा स से भेदकर्के प्रपंचकी प्रतीतीके नहीहोनेसे भी प्रपं चोपशम है

मूल शिवं शंकरं कथं भूतं अद्वैतं सजातीय विजातीय स्वगतभेदरहितं अर्थ मात्रनाशात्मकं चतुर्थं तुरीयं पादं मन्यंते जाग्रदादि निरूपणं आचार्योक्त मेवोच्यते जाग्रत्सत्व गुणाप्रोक्ता केव लं शक्तिरूपिणी मरणं विस्मृति र्मूर्छा निद्राच तमसाहता स्वप्नेस्त कलाज्ञेयाः स्वप्नाः शिव रूपिणी संयोगः सत्वतम सो रजस्यः मिथीय ते स्वप्नंतेजागरादौ स्वभावस्था रजो मयी स

शिव महेतंचतुर्थं मन्यंते ॥

अस्मादौ जागरांते स्फुरना मात्रलक्षणा अवस्था शेषतो माया तुर्या तपरमा कलाहतरं भादि फलव त्परं कैवल्य दायिनी तथाच वार्तिके वि राड् हिरण्यगर्भस्य कारणंचेत्युपाधयः ईशस्य यत्रिभिर्हीनं तुरीयं तत्पदं विदुरिति ॥

भाषा शिव कल्याणंकरको कल्याण करणे वालेको कैसाहै अद्वैत का

गं·ता·
टी·
६४

सजातीय और विजातीय और स्वगत
भेदसे रहित जो अर्थमात्र जो नाद
है तत रूप को चतुर्थ का चौथेपा
द को मानतेहैं अब जाग्रत आदिक
अवस्था होका निरूपण आचार्यनेही
कहा अबभी कहेंगे भलेसान वा
ले जाग्रत अवस्था जोहै सो सत्वगु
ण वाली और केवल शक्तिरूप वा
ली कहीहै मरण और विस्मरण औ
र मूर्छा और गाढनिद्रा तीनमोगुण
करके व्यामहै इहसब सुषुप्ति केही
कलाजान लेणियो और सुषुप्ति आ
प शिव स्वरूप है और सत्वगुण और
तमोगुण का संयोगजोहै सो रजो
गुण ऐसा कहे जाताहै सुषु प्तिकी
अंत विषे और जाग्रत के आदि वि
षे स्वप्नावस्था रजो गुण मय होती
है और सुषुप्ति के आदि विषे और

64

जाग्रत के अंत विषे केवल स्फुरणा मात्र लक्षण अवस्था होकी शोधना को प्राप्त हुई तयाचूप परम कलाजा नती सोही जूत फल और कदली फल आदिकों के न्याई केवल मोक्ष कोही देणे वाली है वार्ति कविषे भी तैसाही कहा विराट् और हिरण्य गर्भ और कारण इह ईश्वर के उपा धियां हैं इना तीनोंसे रहित जो है ति स कोतुरीय पद जानते हैं ॥

मूल पनचो पाध्ये श्रीरामाख्ये वस्तु प्रत्यगात्मत यो पाध्यामित्याह सत्रात्मा सविज्ञेय इति सउपाध्य आत्मा श्रीरामः प्रत्यगात्मत्वे वंविज्ञेयो द्रष्टव्यः आत्मन्येवाऽऽत्मानं पश्येदिति श्रुत्यंतरात् कथं भूतोविज्ञेय इत्यत आह सदोज्वल इत्यादि सम विशेषणानि सदोज्वलः अलिप्तः अविद्यातत्का र्यहीनः स्वरूपाऽस्फूर्तिदुःखाद्यनुभवरहितः सा

सत्रात्मा सविज्ञेयः सदोज्वलोऽविद्यात त्कार्यहीनः स आत्मबंधहरः सर्वदा द्वै तरहितः आनंदरूपः सर्वाधिष्ठान सन्मा

॥ निरस्ताविद्यातमोमोहः ॥

रा॰ता॰ टी॰ ८५

संबंधरहरः स्वरूप प्रति बंधरहितः सर्वदा हेतुर हितः हश्यस्फुरण हीनः आनन्द रूपः आनंद गु णवान्न भवति सर्वाधिष्ठान सन्मात्रःसर्व साधि ष्ठाताचासो सन्मात्रश्च निरस्ताविद्यातमो मोहः माया मायाभासश्चेति मायाः विद्येत्युच्यते अवि द्यातत्कार्य राहित्यं प्रथमतः मायामायाकार्यरा हित्यं पश्चादित्ययोन रुक्तं॥

भाषा इहही श्रीराम नाम करके प्र त्यगात्मता करके उपासना करणाचा हे इस अर्थ कोकहताहै सर्वात्मा इ स करके सो उपासनाकरणे योग्य आत्मा श्रीराम प्रत्यगात्मा विषेवि शे ष का देखलेणा चाहे आत्मा विषेही परमात्मा को देखलिये इस अर्थ वा लीश्रात्मन्येवात्मानं पश्येत इस अर्थ र श्रुतीसे केसाइवा जानना इस वा ले कहताहै सदो ज्वलइसमेलेके सा न ७ विशेषणांको सदोज्वल का अ र्थ लिस और अविद्यातत्कार्यहीन का

65

स्वरूप की अस्फूर्ति और दुःख आदिक
का अनुभव तिस सें रहित और स्वात्म
बेधरूप का स्वरूप के प्रति बेध सेर
हित और सर्वदाद्वैत रहित का द्वय
के स्फुरण से रहित और आनंद स्वर
प ही है आनंदशरण वाला तो नहीं है
सर्वाधिष्ठान सन्मात्र का सबकाधि
ष्ठानाभी सन्मात्र है निरस्ताः विद्या
नमोमोह का माया और मायाभास
कम करके माया और अविद्याकहे दैहैं
प्रथमत अविद्या और तिस के कार्यों
से राहित्य कहा जानना पिछे तमा
या और मायाके कार्यों से राहित्यजा
नना इसी करके इसप्रविषे पुनरु
क्तताकादोषनही है ॥
मूल एवं सर्वेषां नरोत्तरं यथेष्टं हेतरे तमद्रा
वः एवंसमवि शेषण विशिष्टआत्मा वितेय इ
त्यर्कसकर्थवितेय इत्यत आह सहमेवेति उक्त
आत्मात्वहमेवेति सम्य ग्भावयित्वा सम्यक् पदे

नोक्तं भावनं तत्त्वमसि त्वेतदसीति वाक्यस्यार्थ व्या-
ख्यायेन दर्शयति अहमो इत्यादि ब्रह्मणो की कुर्या
त इमेन्ते ॐमित्युच्चरन् अहमुक्तस्वरूप आत्मान
व्यापकं सन्मात्रं यत्प्रसिद्धं परं ब्रह्मवाङ्मनसोर
गोचरं तत्किमिव्यपेक्षायामाह रामचंद्रश्चिदा
त्मक इति अनेन ब्रह्मणः पारोक्ष्य निहन्यर्थ अहं
ब्रह्मास्मीत्युक्तं भवति एवं चसति आत्मा मद्भिन्ना

अहमेवेतिसंभाव्याहमित्योंतत्स्वयंपरं ब्र
ह्मरामचंद्रश्चिदात्मकः सोहमोंतद्रामभद्रः
परंज्योतीरसोहमित्यात्मानमादायमन
साब्रह्मणैकीकुर्यात् ॥

रि पिपासा असक्तिं वारयितं पुनः ॐमित्युच्चरन्न
अहं तद्ब्रह्म परामृष्टमर्थं पूर्वोक्तमनुवदति त
द्रामभद्र इति ॥

भाषा पिछले पिछलेको अगले अ
गलेके प्रति अपनी इच्छाके अनुसा
र कारण कार्यभाव जानना इसी प्र
कार सान ? विशेषणो करके विशि
ष्ट विशेष्य कीना आत्माजानना इह
तैकरहा सोकिस प्रकार जानना इस
वास्तेकहताहे अहमेव ऐसाकहा

66

हुवा जो आत्मा सो हमहीहां इसी
प्रकार भलीभावना करके जानना
इहसम्यक् यद करके कहा भावना
करके जाननाजो है सो तत् त्वं असि
और त्वंतत् असि इसके न्याई आप
समेसमन्वय करके दिखावता है अ
हमो इत्यादिक करके ॐ ऐसा उचा
रण करणे वाला हमही कहे हुये
स्वरूप वाला आत्मा तत् का आप
कसन्मात्र जो प्रसिद्ध पर ब्रह्महै
वाणी और मनकानही विषय है
सोभीक्या होता इस अपेक्षाके उ
पर कहताहै रामचंद्र इत्यादिक
इस करके ब्रह्मकोंपरोक्षताकी नि
हत्तिवास्ते अहं ब्रह्मास्मि ऐसाक
हाहोता ऐसा होके भी ज्ञान प्राप्त
हुई अज्ञान पानकी प्रसक्ति तिस
केनि वारण वास्ते फेर भी ॐ ऐसा

रा॰ता॰ टी॰ ६७

उच्चारण करणे वाला मन्त्र है तत शाह करके विमर्श कीता ग्रर्थ पिछे कहा तिसको ग्रनुवादकरता तत राम भद्र इस करके ॥

मूल तत्त्वादि विशेषणात्रय विशिष्टो रामभद्रः परं ज्योतीरसः परमज्योतिःसारः ग्रहमात्मा ग्र नेन ब्रह्माहमस्मीत्युक्तं भवति एवंच मन्त्रः शा ना पिपासाद्य परोक्त निहतिः ततःसिद्धेव ब्रह्म णोः भिहिता ग्रशना पिपासे शोके मोहे जरो मृत्यु मत्ये तीतिश्रुतेः उक्तमर्थमनुः प संहरति ध्यात्मानमिति इति उक्त प्रकारेण ग्रात्मानः

सदा रामोह मित्येतत्त्वतः प्रवदं तिये नते
संसारिणोनूनं रामएव नसंशयः ॥

मादाय ग्रात्मत्वेन ज्ञात्वा मनसासाधनेन मन सैवानु द्रष्टव्य मिति श्रुतेः ब्रह्मणा श्रीरामचं द्रेण सह एकीकुर्यात् एकोप्राप्नुयो दित्यर्थः एतदेव सकृदावर्तनीय मुपास केनेत्याह स दाराम इतिसदा ग्रासाक्षात्कारं रामोह मित्येत त्वत इति तत्सभावस्तत्वं तस्मात्तत्वतः ॥

भाषा तत ग्रादि क जो तीन विशे षणहे तिनो करके सहित जो राम

भव है सो परे जोतीरूपः का हु
वा परम ज्योतिष का सार रूप है आ
त्मा है। इस करके ब्रह्म है। हो ऐसा
करहा होता जब ऐसा हुवा तब क्षुध
और पिपासा आदिक जो प्रपञ्च
में हैं तिनो की निवृत्ति स्वतःसिद्ध
ही ब्रह्म को कही हुई अशनायापिपा
साशोके मोहं जरां मृत्यु ऐसे नीति
श्रुतेः कहे हुये अर्थ को संक्षेप क
रता है। इत्या त्माने इस करके इति
का कहे हुये प्रकार करके आत्मा
ने आदाय का आत्मता करके जान
के मनो रूपसाधन करके मन सेवा
तु दृश्य इस श्रुति के प्रमाण क
र्के अपने स्वरूप विषे ही आत्मा म
नो रूपसाधन करके देखलेणा इह
श्रुती का अर्थ है ब्रह्मजो श्री रामचं
द्र है तिसके साक्ष्य की कृपात का

रा॰ता॰ टी॰ ६८

68

वैका को पुजा इये इह ही पुरामथे
वारं वारं आवर्त करलेणावाहे उ
पासकने इसवास्ते कहताहै सदा
रामोहं इस करके सदा का कहिये
साक्षात्कार केतलक रामोहं राम
हमहो इसी बात को तत्वतः का
तिसका जो भाव का वास्तव रूप
तिस करके ॥

मूल अथ अर्थः वैखरी मध्यमायां विलाप्य मध्य
मां पश्यंत्यांप पश्यंती परायां मित्येको योगः ता
परां ओंकारे त चोंकारं विभज्य अकारे उकारे
मकारे मकार मर्धमात्रायां इति द्वितीयः तत
ओंकारार्थ हय मधिदैवाः आत्म रूपं प्रथमतः
क्रमशः अकारोः कार मकारार्धमात्रासु लक्ष्म
ण शत्रुघ्न भरत रामाः वैश्वानर हिरण्यगर्भाः
व्याकृतेश्वराः पर पर्यायाः ततो विश्वतैजस
प्राज्ञतुरीया इति तृतीयो योगः स ओंकारः सर्वं
तच्च सर्वं आत्मन्यारोपितं सर्वा त्माचतत्प्रत्यगात
तस्मात्मनोज्ञा ग्रहादि पाद त्रयाः तुसंधानैनेक
त्वः अवधार्य श्रीराम स्वरूपेणाः वतिष्ठेत इ
ति चतुर्थः ॥

भाषा इस विषे इह अर्थ हुवाहै प

हलेनेबैखरी को मध्य माबिषे वि
लीन करके मध्यमाको पश्यन्ती वि
षे विलीन करके पश्यन्ती को भीपरा
विषे विलीन करके इह एकयोग हो
नाहै तिस परा को ओंकारविषे वि
लीन करके तिस ओंकार का विभाग
करके अकार विषे ओर उकार बिषे
मकारकोभी अर्ध मात्राबि षेविली
नकरणा इह दूसरा योग होनाहै
तिस उपरंत ओंकारके जो दो अर्थ
है अधि दैव ओर अध्यात्म रूपहै अ
धमनक्रम करके अकार ओर उकार
ओर मकार ओर अर्धमात्रा बिषे लक्ष
णा ओर शास्त्र्य ओर भवत ओर अश्री
म वैश्वानर ओर हिरण्यगर्भ ओर अ
व्याकृत ओर ईश्वर असाहदसरे नामे
वाल तिस उपरंत विश्व ओर तेजस
ओर प्राज्ञ ओर तुरीय विलीन करले

ते इहतं तीसरायोग होताहै सो ओं
कार सबही विश्वहै सोसब विश्व
आत्मा विषे आरोपित कीताहै सो
आत्माचार ४ पादो वालाहै तिस आ
त्माके जाग्रत स्वप्न और सुषुप्ति रूप
तीन पादोंके अनुसंधान करकै का
तुरीय रूप ही मानने करकै एकता
को निश्चय करकै शुद्धश्रीराम स्वरू
प करकै अस्थितहोनाचाहे इह चौथा
योग जाननाचाहे ॥

मूल एवंयोगचतुष्टयरूपंतत्वं ये तत्वतः प्रवदंति
श्रवण मनन निदिध्यासन परा इति शेषः हार्थः
ते संसारे वर्तमाना अपितूनं निश्चयेन नसंसारि
णः श्रीरामएवते नात्रसंशयः संशय कर्तु ने
रकावाप्तिरेवफलं नान्यत् संशयात्माविनश्यत
तीतिस्मृतेः ननुयदि ते श्रीराम एव तत्सेतुबधा
दिनोकृतं देवदुष्करकर्मसामर्थ्यं किमिति तेषु
नपरिदृश्यते अतः संसारिणएवेति उच्यते श्री
रामे भगवति मायायोगएवैभवतां साधारणं
सामर्थ्यं स्वाभाविकंमायिनंतु महेश्वर मितिश्रुतेः

अविद्या वरण विशिष्टे जीवेत्वसामर्थ्ये स्वकी
ये मायाशावलेपरि ह्रस्य जीवस्यवाविद्याश्ना
वरणं परिहृत्य भक्त्या नुकंपया भगवता शुद्धे
ब्रह्मात्मैकत्वंसमर्पितं मतो माया कार्याः विद्या
कार्यरहिताः शुद्धश्रीराम ब्रह्मरूपजीवन्मुक्ताः
संसारिभिरनिर्धारितशीलाविचरंति ॥

भाषा इसी प्रकार योगवसिष्ठका
चार प्रकार योग रूपतत्व को जो
वास्तव करके अवदंति अर्थात् श्रव
ण और मनन और निदिध्यासनप
रहोन इह प्रशस्तका अर्थहै सो सं
सार विषें वर्तमान भी तूंने का ति
स्वय करके नही संसारी हैं किंतु श्री
रामही है सो इसविषे संशय नही
है संशय करणे वालेकों नरकश्रा
प्ति ही है फल अवरतो कछु नहीहै
संशयात्माविनश्यति इसस्मृतिसे
फेर आक्षेप को उठावताहै हमसु
णताहां जबसो इस प्रकार उपास

रा॰ता॰
टी॰
७॰

सक रामही है तद मेतबंधन आदि
क करके उत्पन्न हुवा देवतियों कोभी
दुष्कर कर्म का सामर्थ्य तिनों विषे
क्या नहीं देषीदा है इसवास्ते सो ऐसा
री ही है इहतो कहोगे इसउते कहा
गे श्रीराम जो भगवान है तिसविषे
मायाके योग्य वैभवता होनेसें अ
साधारण सामर्थ्य स्वाभाविक है मा
यिनेत महे स्वरं इस श्रुतीसे औेर अ
विद्याके आवरण करके विशिष्ट जो
जीव है तिस विषे असामर्थ्य है अ
पनी मायाश वलताको हर करके
औेर जीव संबंधि अविद्याशवलता
कोभी हर करके भक्तोंके उपर दया
करके भगवा नने शुद्ध जो ब्रह्म औेर
आत्माका एकत्व समर्पणकीता अ
र्थात् पावितोंधिकजे सो देदिता है
इसीवास्ते मायाकार्य औेर अविद्या

कार्यसे रहित स्युइ श्रीराम ब्रह्म रू
प जीवन्मुक्त संसारियोंने नही लि
प्यकीते शीलवाले विचरतेहै

मल इतिनै षदोषः तदुक्तं श्रीमद्भागवते नकु
र्यान्नवदेत्किंचिन्न ध्यायेत्साध्वसाधुवा आत्मा
रामोनया वृत्त्या विचरेज्जडवन्मुनिरिति ननु
जीवन्मुक्ति र्नाम देहाभावोवा सदेहस्य भोगाः
भावोवा नाद्यः विरोधात् नहिदेहवतो देहाभा
व संभवः नद्वितीयः भोगानाः मपरिहार्यत्वा
त् नहिभोगकारणे विद्यमाने भोगावि च्छेदः
संभवति ननु भोगस्तात्विकोः तात्विकोवाना
द्यः श्रुतिमोहप्रसंगात् नहितात्विके भुक्त्यादि
प्रमाण ज्ञाननिरास्य द्वितीय मंगीकृत्याह भो
गस्यात्माः ज्ञानपरि कल्पित स्यात्मज्ञानेनतदसं
भवात् नदिदं नसमं जसं दिग्भ्रोहादे र्बाधित
स्यापि प्रत्तुवृत्तिदर्शनात् ॥

भाषा इसीवास्ते इह दोषही नहीहै
जैसाही कहा श्रीमद्भागवत विषे
नकुर्यात ऐसा नाकछुकरिये नाक
छु कहिये नाकछु चंगा मंदाध्यान
करिये आत्माराम इसी वृत्ति करके

यो॰वा॰
टी॰
७२

श्रुति जो मनन शील जन्तु का म
ह्वकेन्याई विचरण करिये फेर प्र
श्नको करताहे हम पूछताहो जो
वल्मीकि जोहै सो क्या देहका अभा
वहै अथवा देहसहित कोही भो
गोंका अभावहै इनाविच प्रथम जो
देहाभाव है सोतनहींहोता विरोध
होनेसें जेसान इहत नहींहै जोदे
ह वाले को देहके अभाव का संभ
व होवे ऐसाही दूसरा जो देहवा
लेकोही भोगोंका अभाव सोभी न
हींहै क्योंकि भोगोंको अपरिहार्य
का छोडने को शक्त नहींहोनेसें
इहभीन हीहोता जो भोगोंकाका
रण शरीरकासंबंध होवेगा भो॰
गोंका विछेद क्या त्यागहोना फेर
पूछताहे इह जोभोग है इहक्यानौ
विक सत्यहै अथवा अनात्विक अ

सत्यहै प्रथम पत्तइनाविच नही
होना नहीमुक्त होनेके प्रसंग से
जिसकारण मत्सुा जो मुक्तियादि
क सो प्रमाण ज्ञान करके कर्तिवा
रणीय होना हमरे पत्तको भोगकी
असत्यताको अंगीकार करके कहना
है भोगजो है सो आत्माके अज्ञान
करके कल्पित क्या ठहरायाहै जिस
कोआत्मज्ञान से नाशकी प्राप्ति
होने से इहभी मुक्त नही होता कों
विरिखा ह क्या रहेकाभ्रम उसको
प्रमाण करके बाधित कोभी सतु
हसिकेदेखनेसे ॥

मूल नहि कायकामलादि कारणे विद्यमाने
पीतो बराबदर्शनमन्यथा देहवर्णश्च नस्यात्
अतोविद्युखांजनकारीनां राज्ञं स्फूयते नहि
वै सशरीरस्यसतःप्रियाऽप्रिययोरपहति
रस्तीति स्मृत्यादिरे हवतो भोगाःसंभवोति
रस्पने अतोःमुक्तो जीवन्मुक्तिरिति अतो व

72

ने तत्त्वज्ञानोत्पत्तिः जीवतो मृतस्यवा नोत्पः शा
म दमादि साधन पूर्वक श्रवणादि कारणाना
मसंभवात् आद्यो नीकार्यः विदुषो याज्ञवल्क्
स्य जीवतः संन्यासः श्रूयते नमृतस्य जीवतस्तत्त्व
ज्ञानोत्पत्तौ कोलाभ इतिचेत् ज्ञानादेवतु मुक्ति
रिति ब्रूमः तथोहवैतत्परमं ब्रह्मवेद ब्रह्मैव
भवति ब्रह्मविदाप्नोति पर मित्यादि श्रुतिभ्यः

भाषा जिसवास्ते इहतो नही होता
जो कोंच और कामलारोगआ दिक
कारण विद्य मान होके भी वस्तु
को पीलानजर विषे नही आवना
और देहके रंगको बदली नही हो
नी होती इसी वास्ते पबुडे हुइयों
जनकआदिकों को राज्य कर णा
स्वनीरे हीहैनह वै सशीरस्य इस
श्रुति कर्के भीदेहवाले को भोगों
की निवृत्ति नही सुनी है शरीर
वालेको प्रिय और अप्रिय की अप
हति का परित्याग नहीहै इह
श्रुतिका अर्थहै इसीवास्ते जीवन्मु

कि योग्यनहीं है इस विषे सिद्धांती म
लेसमाधान के वास्ते आक्षेप पूर्वक
उत्तरकोदेताहै अस पुछनेहोतत्वज्ञा
न की उत्पत्ति का जीवन कोहै अथ
वामरन कोहै इनोंदो पक्षोंके विच
पिछला मरन कों है इह नहीहोता म
न को शम दम आदिक साधन पूर्व
क श्रवण आदिक कारणांके नही
संभवहोने से आय जो पक्ष क्याजी
वन को होती इहत अंगीकार करणा
बाहे जीवन कोही याज्ञवल्क्यको सं
न्यास करणा सुनीदा है नहीन मरन
को अब जो पुछेंगा जीवन को तत्व
ज्ञान की उत्पत्तिविषे कोन्सालाभ
होता ज्ञानसेही मुक्ति होती इह अ
स कहांगे नयोहवै ऐसे श्रुतियोंसे
इनोंका अर्थ निसकरणा जोकोई
हवैका प्रसिद्धि करके ओर निश्चय

गी॰ता॰ टी॰ ७३

करके तिस परे ब्रह्मको आत्मा करके
जानेगा सो ब्रह्मही बनता है और जो
ब्रह्म को जाननेवालाहोवे सो परम
पदको प्राप्त होताहै ॥

मूल नहि भोगसंततिर्दुर्वारेति चेन्न भोगस्यात्मात्ता
नपरिकल्पितत्वात् दिङ्मोहादिवदनिवृत्तिरेवेति
चेन्न दृष्टत्वान्नाम तथापि मोक्षोऽस्ति न स्वप्नवत्स्मो
ह्वत्प्रमाण जनित ज्ञानेन बाधितानुवृत्तिः कार्य
मन्नं न लभते विद्वद्भोजन कादीनां राज्यश्रवणेन
लोकसंग्रहार्थेन तु यदि ते विद्वांसस्तर्हि फलाबा
धनात् सकलकर्म संन्यासेनैवात्र गृहे तो न त्वग्नि
होत्रादिनेति चेन्न चोद्यं यतो हि जन्मांतरीयकर्म फ
लमनुभवति यस्य यादृक्प्रारब्ध कर्म संस्कारस्त
स्य तादृगेव वर्तते अयत्नेपि ज्ञाने तेषां मन्ये एवं
च्या लोकसंग्रहे क्रियमाणे न दोषः ह्येवं सशरीर
स्येति श्रुतेः कागति रिति चेन्न तस्याः सामान्य विष
यत्वेन विदुषः परपद विशेष श्रवणेन च स्वालि
ङ्गित्वगतिरेका।

भाषा फेर भोगो की संतति अनिवा
र्य है यह जो कहोगे यहभी नहीहै
भोगको आत्माके अज्ञान करके परि
कल्पित होनेसे जब कहोगादिश्योर

तोरस्तेकात्मुलना इसके न्याई नही
किहमि देषीहै श्रवणपदेखने आवे
परंतुशयनसे उठे को स्वप्नके भ्रा
मोहकेन्याई प्रमाण जनित ज्ञान
कर्के बाधितकी भ्रनुहाति कार्यमत्र
को नहीलभतीहै विद्वानहुये भी
जनक आदिकोंका राज्यका श्रवण
मो है मोत्र केवल लोक संग्रहवास्ते
होया इतनाभ्रनके भी फेरवादीपू
छताहै जब सो विद्वान थे तद फ
लके नही बाधन से संहरण कर्मी
के सन्यास कर्के ही श्रवणके भ्रनुग्र
ह को करतेरहेन श्रवणके करते
रहन अग्निहोत्र आदिक कर्के भ्रनु
ग्रहको करते नहीरहत इह भी ज
ब कहेगाइह भी आक्षेप नही क
रणा जिसकारण पिछलेजन्म का
कर्म फल भ्रनुभवकों साथही चले

74

आवताहै जिसको जैसा प्रारब्ध कर्म
का संस्कारहोवे तिसकौतैसाही वर्त
नाहोताहै जब तिनोंको उत्पन्न भी
ज्ञान हुवा था तो भी इसी रीती करकें
लोकसंग्रह क्रियमान होवे कोई दो
ष नही है अब जो पूछोंगा नहवै
सशरीरस्य इस श्रुती को कौनसी
गतिहै तिसश्रुति कों सामान्यके वि
षयत्व करकें विद्वान कों परपद स
पविशेषके श्रवण करणे करकें प्रा
प्ती गतिजोलिखीहै सोही गतिजा
ननी ॥

मूल अतो जीवन्नेव मुक्तः नसबाधितानुवृत्ति
भवती तिमुक्ता जीवन्मुक्तिः ननुनेतिनेति नह्ये
तस्मादिति नहन्यन्नन्यपरमस्तिनेहनानास्तिकिं
चनेत्यादि वाक्यसहित तत्त्वमसीतिमहावाक्यो
त्पन्नज्ञानेन प्रपंच प्रविलयद्वारा ज्ञानोत्पत्तौ
प्रपंचस्य निष्प्रपंचब्रह्मरूपेनवा यत्ता यांदेहस्या
पि प्रपंचांतःपातित्वाज्ज्ञानो दय समनंतर मेव
शरीरविप्रलयः न प्रारब्धकर्म वशा दनु वृत्तेः

ज्ञानोदयेय सकल कर्मक्षयेपि प्रारब्धकर्म सं
स्कार वशात्कुलालचक्र भ्रमण मिव जीवन्मु
क्तिः सिद्धैवानो जीवन्मुक्तकाले विचरं तीति ॥

भाषा इसीकारण से जीवंत ही मु
क्त होता तिसको ही बाधित कीते
धर्मी को अनुवृत्ति होती है इस का
रण करके जीवन्मुक्ति योग्यही है
अवर श्रुति पको उठावता है इस
पुछता है नेतिनेति ऊँर नहीं तस्मा
न ऊँर नहीं तत्पर मस्ति ऊँर नेहना
ना स्तिकिंचन ऐसे ऐसे आत्मा से
अवर को निषेध करणें वाले वाक्यों
सहित तत्वमसि इत्यादि वाक्य क
के उत्पन्न हुये ज्ञान करके प्रपंच के
विलय करणे के द्वार करके ज्ञान की
उत्पत्तिहोत संते प्रपंच को निष्प्रपं
चके ज्ञान करके बाधता भी जबसि
द्ध हुई देह को भी प्रपंच के विषया
होने से ज्ञान के उदय के समकाल

वा॰ता॰ टी॰ ७५

ही शरीरकाभी विलयचाहिंदा इह भीनहींहै प्रारब्ध कर्मोंके वशसे देहकी प्रवृत्तहूवीहोनेसे ज्ञान केउ दय करके सबहीकर्मोंका क्षयजा बभी हूवातो भी प्रारब्धकर्मोंके सं स्कार के वश से कुमार के चक्र के भ्रमणके न्याई जीवन्मुक्ति सिद्धही हूवीजैसा कुमार की चक्री पिछले ही प्रयत्नके वशसे भ्रमती रहती ऐसाही पिछले कर्मोंके वेग करके ही जीवन्मुक्तों की प्रवृत्ति होती इ॰ इतात्पर्य इहांजानना इसी वास्तेसो प्रबुद्धजन जीवन्मुक्तभी विचरतेहैं अर्थात व्यवहारजात को करतें हैं

मूल उपसंहरति इत्युपनिष दित्यादि एवंविधो पनिष द्रूलवि द्यायः श्रीरामोपासकः एवमुक्त प्रकारेणावेद जानाति समुक्तो भवति त्रैलो क्य मुक्तो भवति समुक्तो भवतीतिवा पादः तथाच जाबालोपनिषछ्रुतिः तत्र परमहंसाना म संव

नेकाः इति श्वेतकेतु दुर्वासाऋभु निदाघ

ऋभुपनिषद्यएवंवेद समुक्तोभवति स

मुक्तोभवतीति याज्ञवल्क्यः॥

जडभरत दत्तात्रेयरैवतकप्रभृतयोः यक्षलिं

गा अव्यक्ताचारा अनुन्मत्ता उन्मत्तवदाचरंति

त्रिदंडं कमंडलुं शिक्यं पात्रं जलपवित्रंशिखां

यज्ञोपवीतंचेत्येतत्सर्वंभूःस्वाहेत्यप्सु परित्य

ज्यात्मानं अन्विच्छेय था जात रूपधरो निर्द्वं द्वो

भाषा इस ग्रन्थको उपसंहार करके

संक्षेपकरतेहैं इस उपनिषत इस्मा

दिक वाक्य करके इसी प्रकार उप

निषत रूप ब्रह्मविद्याको जो शरीर

मका उपासक ऐसाहीकहे हुये

प्रकार करके जानेगा सो मुक्त हो

ता त्रिलोकी विषे पूज्य होता इस्ले

समुक्तोभवति ऐसा पाठभीहै ऐ

साही याज्ञवल्क्य जीकहते रहे प्र

चीन इसी प्रकार भरद्वाज को या

ज्ञवल्क्य मुनि दिखावता भया है

सहीहै जाबालोपनिषत्त कीश्रुतिः

रा॰ना॰ तत्रपरमहंसानामसंवर्तक आरुणि

टी॰ रमहंसरूह होने संवर्तक आरुणि

७८ औरश्वेतकेतु और दुर्वासा और ऋभु

और निदाघ और जडभरत और दत्ता

त्रेय और रैवतक आदिक अव्यक्त

लिंग क्या नहीं किसी लिंग कोधा

रणे वाले और अव्यक्ताचार क्या कि

सी आचार को भी प्रकट करके नहीं

धारण करणेवाले और नहीउन्मत्त

भी उन्मत्तकेन्याई व्यवहार को धार

तेहैं त्रिदंड और कमंडलू औरछिके

विषेलमकवालेपात्रको और जल

और पवित्रकको और शिखाको औ

रयज्ञोपवीत को इसी सब चीज

को भूःस्वाहा इसमंत्र करके जलवि

च डुबायके आत्माको ढुंडनारहाज

उकेरूपको धारणकरणेवाला और

देहाजोशीनदम्भा आदिक उनो से रहित ॥

मूल निष्परिग्रह स्तत्वब्रह्ममार्गे सम्यक्‍संपन्नः शुद्धमानसः प्राणसंधारणार्थं यथोक्तकाले विमुक्तो भैक्षमाचरन्नुदर पात्रे लाभाऽलाभयोः समो भूत्वा शून्यागारे देवगृहे तृणकूट वल्मीक वृक्षमूल कुलालशालाः ग्निहोत्रनदीपुलिन गिरिकुहर कंदराकोटर निर्झरस्थंडि लेष्वनिकेत वासी अप्रयत्नो निकेतनो ऽप्रयत्नो निर्ममः शुक्लध्यान परायणः अध्यात्मनिष्ठोऽशुभकर्म निर्मूलनपरः संन्यासेन देहत्यागं करोति सपरमहंसो नामेति यद्वा लक्षणः लक्षितः प्रारब्धकर्म संस्कार सदृशाः स्वछंदा विचरंति तस्माद्ब्राह्मणः पांडित्यं निर्विद्य बाल्येन तिष्ठासेत बाल्यंच पांडित्यंच निर्विद्याथमुनिः रमोनंचनिर्विद्याथ ब्राह्मणः केन स्यायेन स्यात्तेन एवा तो ऽन्यदार्तमिति ॥

भाषा परिग्रह जो परिवार तिससे रहित वास्ते ब्रह्म मार्ग विषे भले प्रस्थित हूवा और शुद्धचित वाला और प्राणों के संधारण वाले विधि

यो॰वा॰
टी॰
७७

तकाल विषे सबविकल्पोंसे विमु-
क्त हुवा भिक्षाको करणेवाला उदे
ररूपपात्र विषे लाभ और अलाभ विषे
सम क्या एकरूपहोके शून्य मन्दिर
विषे अथवा देवालय और घासके
ढेर विषे और बरमी विषे और वृक्षके
मूल विषे और कुमार की शाला औ
र अग्निहोत्र स्थान और नदीके पुलि
न और पर्वतके कंदरा और गुफा
और वृक्षके खोखरे और चहांमिटी क
र्के भरि तस्थल विषे नियम सेरहि
त निवास करणे वाला प्रयत्नसे र
हित और ममतासे रहित और शुद्ध
ब्रह्मके ध्यान विषे हीतत्पर अध्यात्म
विचार विषे स्थितीवाला और पाप
कर्मोंके उखाड़ने विषे लगा हुवा सं
न्यास कर्के देहके त्याग को करे सो
ही निश्चय कर्के परमहंस होता ञ

थवा आश्रमियोंके लक्षणो करकें न
हीललितकी नेहोन ऊैर प्रारब्धकर्मो
के संस्कार के समान आवरण वाले
स्वनेत्रजन विचरनेहैं तिसीवास्ते आ
स्मणजोहै सोपांडित्य का चतराई
तिसकोवैराग्य करकें छोड करकें बा
लकपना करकें स्थिति कोकरे ऊैर बा
ल्य ऊैर पांडित्यकोछोड करसो ही मु
नि हुवा मौन ॥

मूल अथम कंडि कायां बृहस्पति प्रश्नोत्तरे यजाव
के बलानि दिंडे द्वितीयायां भारद्वाज प्रश्नोत्तरे नार
नारके कोन तत्त्वरूपं दर्शितं तृतीयायां तत्सार्थ
तत्कृष्ण वाचेन वाचकेकं निरूपितं तस्य ज्ञान
स्वल्पात्मकस्य श्रीराम चंद्रस्य प्राप्तिः कथं भव
तीतितद्वक्रेचतुर्थ्योऽऽ रभ्यते तत्र भारद्वाजाय
बललवियायां सर्वशास्त्रसार भूतायां समर्पिता

अथ हैनं मत्रिः पप्रच्छयाज्ञवल्क्यं यएषोऽनं
तोऽव्यक्त आत्मातं कथमहं विजानीयामि
होवाच याज्ञवल्क्यः ॥

पा मर्सप्रत्स्यकेनात्रिः पृच्छति अथ हैनमत्रिरिति
यस्त्वयासमनं तर कंडिकायांचतुष्यात आत्मो

ए॰ ता॰
टी॰
७८

कः तमात्माने अनेनत्वादृक्षकत्वात्क यमहं वि
जानीयामिति प्रश्नार्थः उत्तरमा हसहोवा चया
ज्ञवल्क्य इति ॥

भाषा और अमौनकोभी छोडके उस
उपरंत ब्राह्मण किस करके होवे जि
स करके होवे तिसी करके ही होवे इस
में अवर सब होने का अनित्य अस्थि
र है पहली कंडिका बिषे कहस्यानिके
प्रश्न के उत्तर बिषे जो तारक ब्रह्म नि
देश कीता दूसरी कंडिका बिषे भार
द्वाज के प्रश्न के उत्तर बिषे तारक का
ओंकार और तारकमंत्र के ऐक्य करके
तिस तारक ब्रह्म का ही स्वरूप दिखा
या तीसरी कंडिका बिषे तिसके अर्थ
को खोल करके वाक्य का अर्थ तिसके
साक्षवाचक का शब्द तिसकी एकता
निरूपण कीती तिस जानेहुये ब्रह्म
और आत्मा के ऐक्य वाले पुरुष को
श्रीरामचंद्र की प्राप्ति कैसी होवेगी

78

इस ग्रंथके कहने वाले चौथी कंडि
का आरंभ होतीहै तिस विच संपूर्ण
शास्त्रोंके ग्रंथों की सार भूत ब्रह्म
विद्या याज्ञवल्क्यने समास जेसीजब
कीनीथी तब बडी उत्कंठा करके अत्रि
नामा मुनि पुछनारहा ग्रंथहै तंइस
वाक्य करके जो तमने पासहोने वाली
इसकंडिकाविषे वत्रव्यात् आत्माक
हा तिस आत्माकों अनंत होनेसें और
अव्यक्त होनेसें कैसाहम जानेंगा इ
ह प्रश्नको अर्थ है इस विषे उत्तर को
कहताहै सहोवाच याज्ञवल्क्यः इस
करके ॥

मूल आत्मना नविमुक्त मविमुक्ते संधिं तरीय मि
तियावत् तस्मिन्नुपास्यः अव्यगात्मनया उपा सनी
यः सर्वेज्ञाः वाख्यितवा दविमुक्त एवो पास्य इति
कोयंनियम इत्याहयएष इति यएष इत्यायदूक्य
कोविमुक्ते प्रतिष्ठित इत्येतस्य व्यापकस्या पिते

सो:विमुक्त उपास्यः यएषोदरो नंतोव्यक्तः
परिहर्तानंदैकरसश्चिदात्मा योयमनंतो

यक्त आत्मा सोविमुक्ते प्रतिष्ठित इति सोविमु
क्तः कस्मि न्प्रति ष्ठित इति व रणायांनाश्यांचम
ध्ये प्रतिष्ठित इति ॥

जसो कंमंडलव दवि मुक्ते संथो प्रतिष्ठाः वस्थाने
मुक्तमितिभावः अनेनोपासना सौलभ्यं दर्शितं स
संपिरेव कर्त्तव्यतानत्व इतिपृच्छति सोः विमुक्तः क
स्मिन् प्रतिष्ठित इति स्पष्टमुत्तरमाह वरणायामि
त्यादिस्पष्टं ॥

भाषा आत्माने नही त्यागा दिना जो सो
हुवा अविमुक्त सो संधिका नहीयहै
इहहुवा इसकातात्पर्य तिसो विषे उ
पास्य का आत्मता करके उपास नाक
र लेणा उसको सबही स्थानोंमें प्राप्ति
न होने से अविमुक्त विषेही उपासना
करलेणा इस प्रकार को नसा इहाभि
पम है इस वास्ते कहताहै यएष इ
स वाक्य करके य एष इत्यादिक को
अनुवाद करके सो विमुक्ते प्रतिष्ठित
इसपर्यंत को व्यापकको भीतेज को
सूर्यमंडल विषे जैसातैसाही अवि

मुक्त नामक संधि विषे प्रतिष्ठा क्या
अवस्थित मुक्त है इहु इसविषे नाम
ये जानना इसकहने करके उपासना
की सुलभता दिखाई हुई अब सो सं
धिही किस प्रकार जाननी इस अर्थ
को फेर पूछता सो अविमुक्त किस
विषे अवस्थित है इस वाक्य करके इ
सका अर्थ भी स्पष्टही है अब इसके
उत्तर को कहना वरणायां इस वाक्य
करके इसका भी अर्थ स्पष्टही है अगे
श्रुतिनेही इस के विवरण को करणे
से ॥

मूल पुनः पृच्छति कावै वरणेति स्पष्टं उत्तरमाह स
र्वान इति स्पष्टं पुनः पृच्छति कतमच्चेति अस्य अवि
मुक्तस्य संधे रित्यर्थः उत्तरमाह भ्रुवोरिति भ्रुवोर्घ्रा
णस्य यः संधिः प्रदेशो स्वदेहे योगी कस्य परस्य वयः
संधिः समध्यो काद्युपाभिधाः विमुक्तेः सप्रधानयाः प्रष्टः

काबै वरणाकाचनाशीति सर्वानिन्द्रियकृता
नोषान्वारयतीति तेन वरणा भवति सर्वा

गी॰ता॰
टी॰
८॰

तिद्धिपक्कता मापान्नाशयती तिनेननाशी
भवति कतमच्चास्यस्थाने भवति ध्रुवोऽक्षण
स्यचयः संधिः सएषद्यौर्लोकस्य परस्यच सं
धिर्भवति यनहै संधिसंध्यां ब्रह्मविद उपास
ते ॥

80

संधि भवतीत्यन्वयः पनदेवो पासन स्थानमितिस
दाचारेणहृदयतिपनहै संधि संध्योऽइति पनन्नसि
हे नपुंसकत्वमार्षं संध्या संध्योपासने ब्रह्म विदः
पूर्वोक्ताः ब्रह्मात्मैकत्व ज्ञाने उपासते उपासनां कु
र्वंति ॥

भाषा फेर पूछताहै कावै इस करकै कौं
नसी निश्चय करकै वरणाहै और कौन
सी निश्चय करकै नाशीहै इह प्रश्न भी
प्रकटतीहै इसके उत्तर को कहताहै
सर्वान इस करकै सबही इंद्रियोंनें की
ने दोषोंकों निवारण करतीहै तिस
करकै वरणाहोतीहै और सबही इंद्रियों
नेंकीने पापोंकोनाश करतीहै तिस
करकै नाशी होतीहै इह भी प्रश्न स्पष्ट
है कोनसा इस अविमुक्तसंधिका स्था
न है ऐसाफेर पूछताहै इस के उत्तर

कों कहनाहे भुवो इत्यादिक करके भक्तों और ब्राह्मणका जो संधिहै ब्र ह्मिकीपङ्क्तिविषे अपने देह विषे ब्रह्म लोक और परमात्माका जो संधि स म ह्मिपङ्क्ति विषेकाशीनामक सवि मुक्तविषे सोही जोनमने प्रश्न कीना संधिहै ऐसाही संबंध जानना इह ही उपासनाका स्थान है इस ग्रंथ को सदाचार करके दृढकरता है पनन वे इस करके इहजो प्रसिद्ध संधि इह संध्याका संध्याके उपास न को पिछेकहे हूये ब्रह्मवेत्ता ब्र ह्म और आत्माके एकत्वज्ञान को उ पासने का उपासनाके विषयको करनेहे ॥

मूल निरुद्धका ध्यानसंध्यावा क्वायक्लेशाव जिं ना संधिनी सर्वभूतानां सासंध्याह्येकदंडिना मितिस्मृतेः उपसंहरतिसोऽविमुक्त इति यस्य याहश्च आत्मब्रह्मेक्यं कथमहं विजानीयामिति

रा॰ता॰ टी॰ ८२

सच्चात्मा॰ विमुक्ते भुवो ञ्श्रीणस्यच संधो उपास्यः सर्व दोषा सनीयः देवो भ्रूमध्यगोचरः भ्रूमध्ये संस्थितेदेव मित्यादिस्मृतिभ्यः तथाच वसिष्टः

सो॰ विमुक्त उपास्य इति ॥

निद्रादौ जागरस्यांते योभाव उपजायते तेभावे भावयवाम जीवन्मुक्तःसदाभव यदिदेहं पृथक् कृत्य चिति विश्रम्यतिष्ठसि अधुनैवसखीशांतो जीवन्मुक्तोभविष्यसीति यतदेवाः विमुक्ते प्रसिद्धे योजनीयं यज्ञदानादिभिर्बहु जन्मसु संपादितसुकृत संस्कार निचय खचित चरम शरीरस्य ॥

भाषा जल सेबिनाही शोधानरूप संध्याहै सो वाणी और शरीरकेक्लेशसेरहितहै सोही सबनी जीवांको संधान का आत्मा और ब्रह्मकायेका तिसका बनावन वाली सोही एकदंडी जो महाविरक्त संन्यासीतिनां की संध्याहोतीहै इस स्मृतिको प्रमाणसे अब सबही अर्थको उपसंहारकरताहूं मैंविमुक्त इस करके जो तुम

81

ने पुछाथ्था आत्मा औेर बलके प्रेका
को कैसाहमजानें गा इस प्रकार
सोही आत्मा अविक्षक काभलवा औ
र आराकी सेधिविष सदाही दृढ
लक्षना करके उपासना करलेरावा
हे देवोभ्रूमध्य इस स्रुति औेर भ्रूम
ध्येसे स्थिने इत्यादिक स्रुतियोसे स्र
तियोका अर्थनाइहहे देव जो पर
मात्माहे सो भ्रूमध्यके विषेहे औेर
भ्रूमध्यकेविचभले आस्थितजोदेव
नाहै,श्रीसाहीवसिष्ठनेकहा निद्राके
आदि विषे औेर जायतके अंत विषे
अर्थात सेधिविषे योभाव आत्म ब
लकी एकतालक्षरा उत्पन्नहोताति
सीभाव को सदाही भावनाकररा
वाला तम हे राम जीवन्मुक्तहो औेर
नव देह को बल करके चित विषे
ही विश्राम करके बेठेगानव अबे

रा॰ता॰ टी॰ ८२

82

ही साक्षी और शांत जीवन्मुक्त होगा
इहही व्यवहार प्रसिद्ध अविमुक्त विषे
जो इदेशा यज्ञ और दान आदिकों क
कै बहुत जन्मांतरों विषे सिद्धकीते
जो पुण्यहै तिनोंके संस्कार समूहों
करकै वासित हुये चरमशरीरवाले
को ॥

मूल शमादिसाधनचतुष्टय संपन्नस्य एवं ताप
नीयोक्तस गुणो पासन प्रसादलब्धचित्त स्थैर्य
स्य श्रवण मनन निदिध्या सन जनित साक्षा
त्कारानुभववैभव विलास निरावर्ण कैवल्या
वाप्तिः साक्रांतमाणस्य सकल कर्मसंन्यास
पूर्वक गलितदेहाभिमानस्य यत्र कुत्र विहरते
मानस्य मुवो ब्राह्मणस्य सेव्य विमुक्तो पासने निर्गु
ण श्रीरामोपासनाभिधेयमेव मुक्तिनान्यदिति

सोः विमुक्तं ज्ञानमाचष्टे यो वै तदेवं वेदेति

सर्वशास्त्रार्थोपरि समाप्तिः एवंभूतः श्रीरामात्मो
पासक एव गुरुर्भवतीत्युपासनाफलमाह सो
विमुक्तमिति यउपासकः वैनिश्चयेन तदुपा
सने एव मुक्त प्रकारेण वेद जानातिसो विमुक्तं
तरीयाख्यं संविज्ञानं आचष्टे कथयति तदुक्तं

गीतासु उपदेक्ष्यंतिते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शि
नइतिशिक्षा ह्यस्य शिष्यस्य:तिरहस्यवा छिन्न
णमेवसं क्रमणेनबोधमुत्पादयतीत्यर्थः सर्व
त्रेतिशाह्न:प्रश्न समाप्तो उत्तरसमाप्तोवक्तानघः

भाषा शम आदिक चारसाधनो करके
सहित को सर्वतापनीय विषे कही
हुई जो सगुण की उपासना तिस के
प्रसाद करके लब्ध हुयी चित्त की स्थिरता
वाले को श्रवण और मनन और निदि
ध्यासन करके उत्पन्न हुये जो साक्षात्का
र रूप अनुभव के वैभव तिनो के वि
लास करके जो निरावरण कैवल्य की
प्राप्ति तिस को कांक्षा करणे वाले को
सहणी कर्मो के संन्यासपूर्वक गलि
त हुये देह के अभिमान वाले को और
जिस किसी स्थान विषे वर्तमान को
भक्तों और आणकी रोपि रूप प्रवि
मलका उपासन निर्गुण श्रीरामो
पासना रूप श्रेय योग्य है प्रवरत

नही योग्य इसी प्रकार सकलशास्त्रा
र्थ की समाप्ति हुई ऐसा हुवा श्रीरा
म आत्माका उपासकहो (र्थेपरि स
माप्तिः एवंभूतः श्रीरामोत्मोपास
कएव गुरुर्भ) गुरु होना इसी प्रका
र उपासनाके फल को कहताहै सो
ऽविमुक्त इस करकें जो उपासक वै
कानिश्चय करकें तिस उपासन को
एवं का करे हुये प्रकार करकें वेद
का जानेगा सो अविमुक्त को नही
यनामकसंधिज्ञान को कहताहै ते
साही कहा गीताविषे उपदेक्ष्यंति इ
स करकें तत्वदर्शी जो ज्ञानीहैं सोते
रेताई ज्ञानके उपदेश को करेगे शि
ष्याकेयोग्यहुये शिष्यको प्रतिरह
स्य होनेमे सिवाव नाही संक्रमण
करकें बोध को जनावताहै सब ज
गाविषे इतिशाह प्रश्नकी और उत्तर

कोभी समामिबिषेजानना ॥

मूल शिष्यस्य संमुखी करणा याख्या यिकामाह
श्रयते इति नर्थसेयौ श्रितायामपि सद्याविर हि
तस्य बधिरार्थितगत्यामि वभवम्यतः श्रयतदते

श्रयते श्रुतवाच स्वयमेव याज्ञवल्क्यः श्री
रामचंद्रस्य मनुंजनापदृष्टमधजः मन्वं तर
सहस्रैस्तु जपहोमार्चनादिभिः ततः प्रसन्नो
भगवान् श्रीरामः प्राह शंकरम् हणीष्वयः
दभीष्टितदास्यामि परमेश्वरइति सहोवाच
मणिकर्णिकायां देवे गंगायावातटे पुनः
श्रियतेदेहिनस्तेतो मुक्तिनातोवरांतरम् इ
ति सहोवाच श्रीरामः क्षेत्रेत्रनवदेवेशयत्र
कुत्रापि वासिनाः कृमिकीटादयोप्याशुमुक्ताः
संत नचान्यथा अवि मुक्तेनवक्षेत्रे सर्वेषांतु
कि सिद्धये अहंसन्निहितस्तत्रपाषाण प्रति
मादिषु क्षेत्रे स्मिन्योर्चयेद्भक्त्या मंत्रेणा नेन
मांशिव ब्रह्म हत्यादि पापेभ्यो मोक्षयिष्या
मिशुचः ॥
नरमविंशतिस्वयमेवयाज्ञवल्क्यः उवाच किमुवा
चेत्याह श्रीरामचंद्रस्येत्यादि ॥

भाषा अब शिष्योके संमुख करणोवा
ले इतिहास को कहताहे श्रयते इस
कर्के ततीय मेयीजब शास्त्रित भी हो

रा.ता
टी.
८४

वैंगीतो भी श्रद्धासे रहित पुरुष को
बोलेको सुनायाचाहस्य हनमान जैसा
अधिहोतो इसवास्ते तिसके अनंतर
अतिसुतिके प्रति आपही याज्ञवल्क्य
मुनि कहतारहा क्या कहतारहा ति
स को कहताहै रामचंद्रसुइत्यादिक
श्लोकों करके इता श्लोको को स्पष्टहो
नेसे संस्कृत करके अर्थनही कहा
भाषा करके तकहते हैं हृषभध्वज जो
महादेवहै सो काशीविषे अस्थित
होके श्रीरामचंद्र के मंत्रको जपतार
हा हजारोंमन्वंतरोंविषे जप और हो
म और अर्चनआदिकों करके उपासना
करता रहातद प्रसन्न हुवा श्रीराम
महादेव को कहता रहा हे परमेश्व
र जोतेरा अभीष्ट है सो कहो हमतेरे
ताई देवेंगा सो महादेव कहतारहा
मणिकर्णी विषे अपणेवास्ते विषे

84

अथवा गंगा केनट विषे जो मरेंगा उ
स जीव को मुक्ति देवो अवर वरहम
को कोई नहीं है सो श्रीराम कहता
रहा इस हमारे क्षेत्र विषे जहां तहां
मृतहूये कृमि और कीट आदिक भी
सिताबी मुक्त होनेगे अन्यथा नही हो
नेगे अविमुक्तनाम इस हमारे क्षेत्र
विषे सबों की मोक्ष सिद्धी वास्ते पाषा
णों की प्रतिमा आदिकों विषे प्रस्थित
हो इस क्षेत्र विषे जो भक्ति पूर्वक श्र
द्धा मंत्र करके हमारे पूजन को करेंगे
शिव उस ब्रह्महत्या आदिक पापोंसे
हम तिस को मोक्षण करेंगे शोक
को मत कर ॥
मूल ज्ञानसील आदः विमुक्त सेवकस्य यत्क्षेत्र
फलं न दाह श्रीरामचंद्रेणोति जन्मांतरितानिति
प्रारब्धकर्म व्यतिरेकेण इह जन्मकृत कर्मोपल
क्षणार्थ शेषं स्यात् अविमुक्तोपासनयाः नाया
तः श्रीराम सात्ताकारो यस्मात्तस्मादविमुक्त
मनः श्रीराम

त्यागे परम पुरुषार्थ हानिः स्यादिति भावः ततः प

रा॰ ता॰ टी॰ ८५

नतो वा बलेनो वापि येन मंत्रवरं तरम जी
वेन्तो मंत्रसिद्धाः स्युर्मुक्ता मां प्राप्नुवंतिते मुमु
र्षोर्दक्षिणे कर्णे यस्य कस्यापि वा स्वयम उ
पदेक्ष्यसि मन्मंत्रं स मुक्तो भविता शिव इ
तिरामचंद्रेणोक्त योः वि मुक्तं पश्यति सज
न्मांतरितान्दोषान्नाशयतीति ॥

85

सत्नोभगवानिति पूर्वोक्त सुतोकेन प्रकारेण भगवा
न्प्रसीदति तंत्रश्च पंचमके डिकारंभे श्रीराम प्रसन्न
करणोपायं स्कृति अथहैनमित्यादि ॥

भाषा तुमारे से अथवा बल से जो इ
स षडक्षर मंत्रको लभनगे सो जीवन
हीमंत्र सिद्ध होते मुक्त होके हम को
प्राप्त होनगे मरणेके उन्मनयार हुये
जिस किसीको तुम सज्जे कान बिषे
हमारे मंत्रके उपदेशको करेंगेहे शि
व सो मुक्त होवेगा ज्ञान की सुलभ
ता से श्रविमुक्त के से वक्त को जो श्रवा
न फल का प्रमुख फल है तिस को
कहतेहै श्रीरामचंद्रेण इस करके ज

ओंनविनान् क्या प्रारब्धकर्मोंमे प्रवर
कर्मोंके दोषोंको नाशकर देवेगा ऊ
र इस जन्मविषे कीनियां कोभीनो
शकर देनाहै अविमुक्तकी उपासना
करके जिसवाले अनायास करके श्री
राम कासाक्षात्कारहोताजिस वाले
अविमुक्तके त्याग विषे परम पुरु
षार्थ की हानि होवेगी इहत सिद्धा
न है ततः प्रसन्नो भगवान इत्यपि
छेकरे हुवे कोमन के किस प्रका
र भगवान प्रसन्नहोता जिस प्रश्न
को पंचमी कंडिका के आरंभ विषे
श्रीराम के प्रसन्न करणे के उपाय
को पुछताहै अथहै नमित्यादिक
करके ॥
मूल यद्यपि शंकरः प्रकतस्तथापिसम योजने
ब्रह्मविष्णोर्वाणा सी हनोंने रामेण शिविनः
सन्निमधः गदया गयेनगाधया प्रकेवाचा ग
दयकार्यावाचीतिधानः यः प्रसिद्धोवे तिष्ठिते

रा॰ ता॰
टी॰
८९

86

अथहैनं भरद्वाजो याज्ञवल्क्यमुवाच अथ
केर्मंत्रैः स्तुतः श्रीरामः प्रीतो भवति स्वा
त्मानं दर्शयति तन्नो ब्रूहि भगवन्निति स
होवाच याज्ञवल्क्यः श्रीरामेणैवं शिक्षितो
ब्रह्मा पुनरेतया गाथया नमस्करोति विश्व
रूपधरं महाविष्णुं नारायणमनामयम्
पूर्णानन्दैकविज्ञानं परं ज्योतिः स्वरूपिण
म् मनसा संस्मरन्ब्रह्मा तुष्टाव परमेश्वरम्
यो वै श्रीरामचंद्रः स भगवान् द्वैतपरमा
नन्दात्मायः परं ब्रह्म भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै न
मो नमः १ यो वै श्रीरामचंद्रः स भगवान्
यश्चाखंडैकरसो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो
नमः २ यो वै श्रीरामचंद्रः स भगवान्यश्च
ब्रह्मानन्दामृतं भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो न
मः ३ ॥

श्रियान्तः श्रीराम एव स एव भगवान् षड्विधैश्व
र्यसंपन्नः द्वैतपरमानन्दात्मा द्वैतो यः परमा
नन्दस्तदात्मायः परं उत्कृष्टं ब्रह्मापि सन् भूर्भु
वः स्वर्लोकत्रयीरूपोऽस्ति तस्मै एवं रूपाय वै नि
श्चितेन नमो नमः ॥

भाषा इसके उपरांत इस याज्ञवल्क्य
मुनिको भरद्वाजऋषि कहता रहा
हे महाराज हम पूछता किन मंत्रों

करकें स्नान कीना श्रीराम प्रसन्न
होना और अपनेस्वरूप कों दिखा
वनाहै सो असेको कहा सो यात
वल्का कहनारहा श्रीरामेण इस
करकें जद बी इहो शंकरमहादेव
प्रसन्नहै तोभी असाही कालांतर
बिषे बलाभी श्रीरामनेही काशी
के स्मसान बिषे सिखाया ऊवा है इस
अर्थ जाननागदया का गयत्रूपगा
या करकें मंत्रका अर्थ जो प्रसिद्ध वै
का निश्चय करकें लक्ष्मीने सेविन
कीना श्रीराम सोही भगवान का
छे ६ प्रकार ऐश्वर्य करकें संपन्न अ
हैन परमानन्द स्वरूप होता और प
रे ब्रह्म भी होना भूर्भुवःस्वः जोतीन
लोकहै तत्स्वरूप भीहै तिस ऐसे
सकलतत्व स्वरूप वाले रामके ता
ई वैक्यानिश्चय करकें नमोनमः का

वारंवारनमस्कारहोवे ॥

मूल यो वै श्रीरामचंद्रः स भगवान्यत्तारकं ब्र
ह्म भूर्भुवः स्व स्तस्मै वै नमो नमः ४ यो वै श्रीरा
मचंद्र स भगवान्यश्च ब्रह्माविष्णु रीश्वरो यः स
र्वे देवात्मा भूर्भुवः स्व स्तस्मै वै नमो नमः ५
यो वै श्रीरामचंद्र स भगवान्ये सर्वे वेदाः सांगाः
सशाखाः सपुराणा भूर्भुवः स्व स्तस्मै वै नमो न
मः ६ यो वै श्रीरामचंद्रः स भगवान्यो जीवात्मा
भूर्भुवः स्व स्तस्मै वै नमो नमः ७ यो वै श्रीराम
चंद्रः स भगवान्यः सर्वभूतांतरात्मा भूर्भुवः
स्व स्तस्मै वै नमो नमः ८ यो वै श्रीरामचंद्र
स भगवान्यो देवासुरमनुष्यादिभावो भूर्भुवः
स्व स्तस्मै वै नमो नमः ९ यो वै श्रीरामचंद्रः स
भगवान्यो मत्स्यकूर्माद्यवतारो भूर्भुवः स्व स्त
स्मै वै नमो नमः १० यो वै श्रीरामचंद्रः स भग
वान्यश्च प्राणो भूर्भुवः स्व स्तस्मै वै नमो नमः
११ यो वै श्रीरामचंद्रः स भगवान्योऽन्तःकरणच
तुष्टयात्मा भूर्भुवः स्व स्तस्मै वै नमो नमः १२
यो वै श्रीरामचंद्रः स भगवान्यश्च यमो भूर्भुवः
स्व स्तस्मै वै नमो नमः १३ यो वै श्रीरामचंद्रः
स भगवान्यश्चांतको भूर्भुवः स्व स्तस्मै वै नमो

87

नमः १४ योवै श्रीरामचंद्र स्सभगवान्यश्चम
त्स्य भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः १५ योवै
श्रीरामचंद्रः सभगवान्यश्चामरते भूर्भुवःस्व
स्तस्मैवै नमोनमः १६ योवै श्रीरामचंद्रःसभ
गवान्यानिपंच महाभूतानि भूर्भुवःस्वस्तस्मै
वै नमोनमः १७ योवै श्रीरामचंद्रः सभगवा
न्यःस्थावर जंगमात्मको भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै
नमोनमः १८ योवै श्रीरामचंद्रः सभगवान्ये
पंचाग्नयो भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः १९
योवै श्रीरामचंद्रः सभगवान्याः सप्तव्याहृत
यो भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः २० योवै श्री
रामचंद्रः सभगवान्याविद्या भूर्भुवःस्व स्तस्मै
वै नमोनमः २१ योवै श्रीरामचंद्रः सभगवा
न्यासरस्वती भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः २२
योवै श्रीरामचंद्रःसभगवान्यालक्ष्मी भूर्भुवः
स्वस्तस्मैवै नमोनमः २३ योवै श्रीरामचंद्रः स
भगवान्यागौरी भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः
२४ योवै श्रीरामचंद्र स्सभगवान्याजानकी
भूर्भुवःस्व स्तस्मैवै नमोनमः २५ योवै श्रीरा
मचंद्रः सभगवान्यश्चत्रैलोक्यं भूर्भुवःस्वस्त
स्मैवै नमोनमः २६ योवै श्रीरामचंद्रः सभ
गवान्यश्चसूर्यो भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः
२७ योवै श्रीरामचंद्रःस भगवान्यश्चसोमो

रा.ता.
टी.
८८

88

भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः २८ योवै रामचंद्रः
सभगवान्यानिनक्षत्राणि भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै न
मोनमः २९ योवै रामचंद्रःसभगवान्येचनव
ग्रहा भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः ३० योवै रा
मचंद्रः सभगवान्येचाष्टौवसवो भूर्भुवःस्वस्त
स्मैवै नमोनमः ३१ योवै रामचंद्रः सभगवान्ये
चाष्टौलोकपाला भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोन
मः ३२ योवै रामचंद्रःसभगवान्येचैकादशरु
द्रा भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः ३३ योवै श्री
रामचंद्रःसभगवान्येचद्वादशादित्या भूर्भुवः
स्वस्तस्मैवै नमोनमः ३४ योवै श्रीरामचंद्रः
सभगवान्यच्च भूतं भव्यंभविष्यत् भूर्भुःस्वस्त
स्मैवै नमोनमः ३५ योवै श्रीरामचंद्रःसभग
वान्योब्रह्मांडस्यांतर्बहिर्व्याप्नोति योवैविराट्
भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः ३६ योवै श्रीराम
चंद्रः सभगवान्योहिरण्यगर्भो भूर्भुवःस्वस्तस्मै
वै नमोनमः ३७ योवै श्रीरामचंद्रःसभगवा
न्याप्रकृति भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः ३८
योवै श्रीरामचंद्रः स भगवान्यश्चोंकारो भूर्भु
वःस्वस्तस्मैवै नमोनमः ३९ योवै श्रीरामचंद्र
सभगवान्याश्चतस्रोर्धमात्रा भूर्भुवःस्वस्तस्मै
वै नमोनमः ४० योवै श्रीरामचंद्रःस भग
वान्यःपरम पुरुषो भूर्भुवःस्व स्तस्मैवै नमो

नमः ४१ ॥
मूल पतेमंत्रा श्रीनरसिंह पूर्व तापनीये द्वात्रिंश
त्सूक्ते तथा पूर्वणाशिर सिहद्योपनिषदि मंत्रा
पिबनानां पाठक्रमा दृष्टाः श्रीरामचंद्रानुग्रह
व द्विवेहूया पारि शोधिताः पाठक्रममंगामि
या लिखिता विज्ञेयाः पभिःसर्वात्म कत्वं श्रीरा

योवै श्रीरामचंद्रःसभगवान्यश्चमहेश्व
रो भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः ४२ यो
वै श्रीरामचंद्रः सभगवान्यश्चमहादेवो
भूर्भुवःस्वस्तस्मैवै नमोनमः ४३ योवै
श्रीरामचंद्रः सभगवान्यो ॐनमोभग
वतेवासुदेवायमहाविस्तुर्भूः ४४ योवै
श्रीरामचंद्रःसभगवान्यःपरमात्माभूः
४५ योवै श्रीरामचंद्रःसभगवान् ज्ञा
नात्माभूः ४६ योवै श्रीरामचंद्रः सभग
वान्यःसच्चिदानंदाऽद्वैतैकरसात्मा भूर्भु
वःस्वस्तस्मैवै नमोनमः ४७ इमान्मंत्र
स्त्वमितिमसमचत्वारिंशन्मंत्रैर्नित्यं देवंस्तौ
तितस्यदेवःप्रीतोभवतिस्वात्मानंदर्शी
पतितस्मायपनेमंत्रैर्नित्यंदेवंस्तौतिसो
मृतत्वंचगच्छतिसोमृतत्वंचगच्छति इत्य
थर्वणवेदेरामोत्तरतापनीयोपनिषत्

रा॰ता॰ टी॰ ८५

मचंद्रस्योच्यते तस्य ब्रह्मविदः देवं श्रीरामचंद्रं
साक्षात्पश्यति कृपयाबहिरपिच पश्यति अम
तत्वमोक्षंगच्छतिप्राप्नोति ग्रंथममासिंदर्शी
यति इत्यथर्वेणरहस्ये श्रुति ॥

भाषा इहमंत्र नृसिंह पूर्वतापनीय
के बत्तीसमेसूत्र विषे और अथर्व
ण शिरःकीरुद्रोपनिषत् विषे औ
र इहांभी नाना प्रकार पाठक्रम यु
क्तदेखिइये है और श्रीरामचंद्र के
अनुग्रहवालेभक्त जनोंने बहुतवा
रीपरिशोधितकीने और पाठक्रम
के भंग होनेके भयसे साक्षालिखे
इये जानने रक्षा करके सर्वात्मकता
श्रीरामचंद्र को कहेजातीहै तस्य
का तिस ब्रह्मवेत्ताको देवजो श्री
रामचंद्रहै तिसकोसाक्षात् अपने
स्वरूपमे बाहिर भीतिसकी कृपाक
रके देखेगा अमरतत्वकामोक्ष को

९०

प्राप्तहोवेंगा ग्रंथकी समाप्तिको दि॰
खावनाहै इतिश्री इसककै इतिश्री
महाराजनेह कश्मीराधिपती इ
स्यथवेलारहस्येसमाप्तम ॥ शुभम

नं० ५३६२-घ

90

नं० ५३६२-घ
अथर्वण वेदे 'श्री रामतापनीयोनिषत्'
भाषाटीका सहिता (वेदान्तम्)
पत्राणि ६० (सम्पूर्णम्)



५५